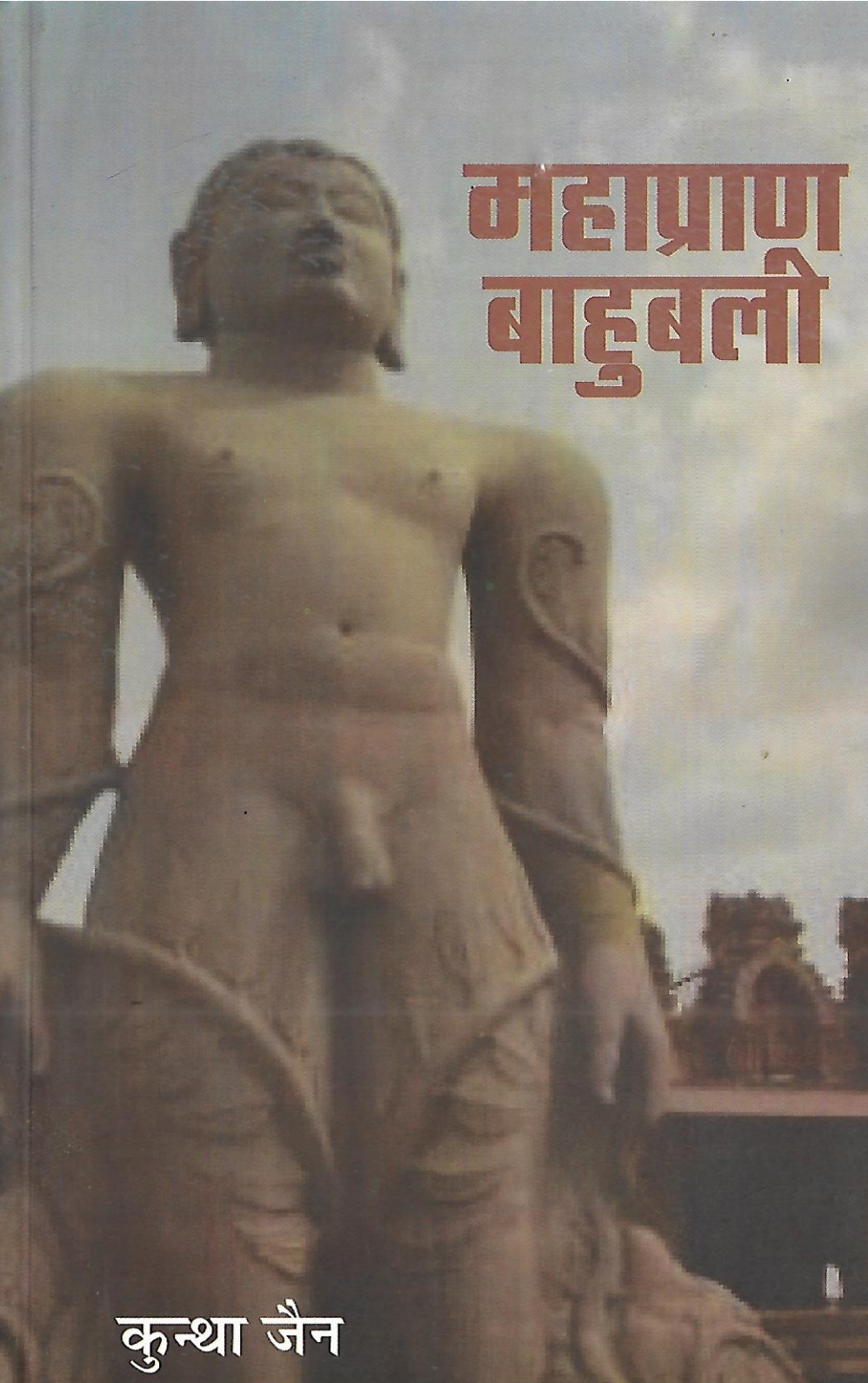

महाप्राण बाहुबली

कुन्था जैन

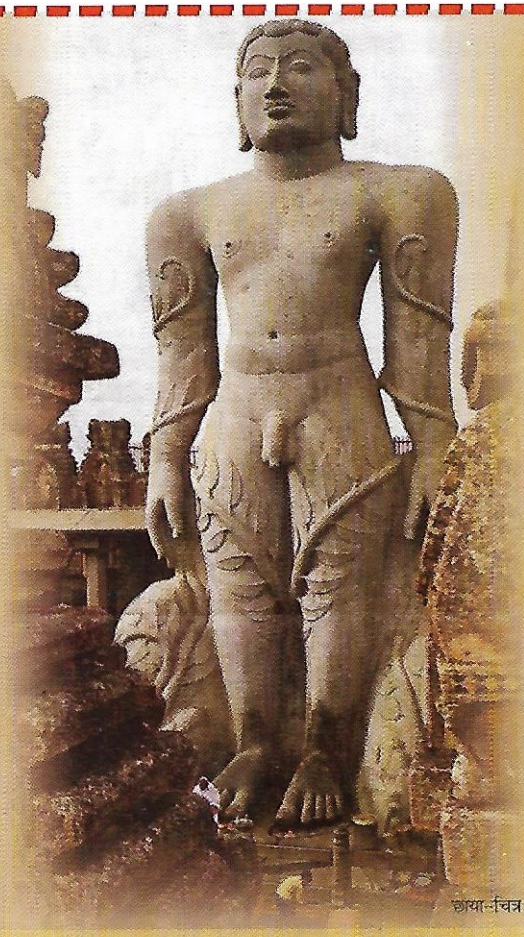

छाया-चित्र : नारायणी गणेश

अक्षराभिषेक

गोम्मटेश्वर भगवान बाहुबली महामस्तकाभिषेक
7 से 26 फरवरी, 2018

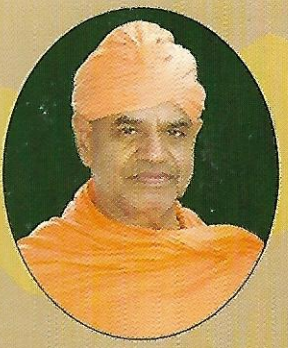

स्वस्तिश्री चारुकीर्ति भट्टारक स्वामी

अक्षराभिषेक

गोम्मटेश्वर भगवान बाहुबली महामस्तकाभिषेक
7 से 26 फरवरी, 2018
के शुभ अवसर पर यह ग्रन्थ सुधी पाठकों को
सादर समर्पित किया जाता है।

निवेदक
अक्षराभिषेककर्ता दातार

जिनवाणी श्रुत प्रकाशन समिति
श्रवणबेलगोला

महाप्राण बाहुबली

कुन्था जैन

भारतीय ज्ञानपीठ

लोकोदय ग्रन्थमाला : ग्रन्थांक 416

प्रकाशक : **भारतीय ज्ञानपीठ**
18, इन्स्टीट्यूशनल एरिया, लोदी रोड, नयी दिल्ली-110 003

मुद्रक : चार दिशाएँ प्रिंटर्स, नोएडा

आवरण : चन्द्रकान्त शर्मा

© भारतीय ज्ञानपीठ

MAHAPRAN BAHUBALI
(Poetic Drama)
by Kuntha Jain

Published by
Bharatiya Jnanpith
18, Institutional Area, Lodi Road, New Delhi-110 003
Ph. : 011 24698417, 24626467; 23241619 (Daryaganj)
Mob. : 9350536020; e-mail : bjnanpith@gmail.com
sales@jnanpith.net, website : www.jnanpith.net

Second Edition : 2018
Price : Rs. 100

महान् आध्यात्मिक शिल्पी

एलाचार्य श्री विद्यानन्दजी महाराज

एवं

तरुण तपस्वी स्वस्तिश्री भट्टारक चारुकीर्ति स्वामी जी

के

चरणों में समर्पित

बिटिया इन्दु और प्रिय मदन को भेजने के लिए
जो टोकियो (जापान) में दूर बैठे
महामस्तकाभिषेक के पुण्य अवसर
को अनुभूत कर सकें।

भूमिका

भगवान बाहुबली के प्रति अनायास भक्ति-प्रेम उमड़कर तन-मन को क्यों विभोर कर जाता है, इसको सचेतन स्तर पर अनुभव कर व्यक्त करने का विनीत प्रयास करूँ, ऐसी प्रेरणा अन्तर्मन में जगी। और सौभाग्य मेरा, कि अन्तर्मन की भावना को आशीष-आदेश मिला श्रवणबेलगोल के पूज्य चारुकीर्ति भट्टारकजी का। पावन तीर्थ गोमटेश्वर के दर्शन करने चार वर्ष पहले, जब हम दम्पती यहाँ आये, तो भगवान की प्रतिमा के साथ पूज्य भट्टारकजी को प्रणाम कर चित्त गद्‌गद् हो गया।

चौबीस तीर्थंकरों की जन्मजात गुण सम्पन्नता से विलग, भगवान बाहुबली, आदियुग में मानव-प्रकृति के सर्वगुणों से सम्पन्न प्रथम कामदेव जनमे। पिता आदिनाथ द्वारा जो उन्हें शिक्षाएँ दी गईं, वह भी उन विषयों में पारंगत बनाने की, जो सांसारिक और भौतिक विकास के उन चरणों से जुड़ी हुई थीं, जिनका सीधा सम्बन्ध आध्यात्मिकता और अलौकिकता से नहीं था। मनुष्य के स्वाभाविक आवेग-संवेग, पुरुष-स्त्री के प्रणय-सम्बन्ध, शरीर की चिकित्सा, हाथी, शेर, घोड़े व अन्य वन-जीवों से सुरक्षा, प्रकृति के उपादानों में जो नये-नये परिवर्तन हुए—धुआँधार वर्षा, प्रलय का-सा जल-प्रवाह, झंझावात, बिजली का वज्रपात, पर्वतों का उद्‌गम और भूकम्पों द्वारा विध्वंस, सब कुछ को नियमित करने की युक्ति, और शक्ति-विद्या, के वह स्वामी थे। इस प्रकार मानव-शरीर का चरम विकास, और बाहर के जगत पर सम्पूर्ण अधिकार, जिस व्यक्ति की उपलब्धि बन गये, उसके पराक्रम ने जब आध्यात्मिक जगत को अपने कृतित्व का क्षेत्र बनाया, तो आश्चर्य नहीं कि वहाँ भी वह अद्‌भुत प्रभुत्व के अधिकारी हो गये। उनके पिता आदिनाथ कितने वर्षों तक तपस्यारत रहे तब कहीं केवलज्ञान की ज्योति जाग्रत हुई; किन्तु बाहुबली स्वामी ने केवल एक वर्ष की अडिग तपस्या की; और यद्यपि मानवीय राग-विराग की रेखायें, इस परम मानव के मन पर अपना आकार रचती रहीं, फिर भी जब संयम-साधना का परिपूर्ण क्षण आया केवलज्ञान का प्रभामंडल अग-जग को प्रदीप्त कर गया। तब सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह बन गई कि आदि तीर्थंकर से पहले ही इस महाप्राण मानव ने मुक्ति प्राप्त कर ली। जिस प्रकार लौकिक विजय के लिए उन्होंने अपने ही बाहुबल पर भरोसा किया, उसी प्रकार आध्यात्मिकता की उपलब्धि के लिए उन्होंने तीर्थंकरी दीक्षा को आलम्बन न बना कर, अपने ही आत्म-बल को तपस्या की दाह-अग्नि में शोधा।

भगवान बाहुबली के चरित्र के एक-एक पक्ष पर जैसे-जैसे मेरा ध्यान केन्द्रित होता गया, उनके जीवन का सम्पूर्ण परिवेश, उस जीवन के परिप्रेक्ष्य में आनेवाले सारे पात्र और उनकी कथा को व्याख्यायित करनेवाले उत्तर और दक्षिण के कवियों की साधना-पूत दृष्टि मेरे अन्तर में चित्र-पर-चित्र बनाती गई। यही कारण है कि मुझे पात्रों के विषय में कथ्य की और अभिव्यक्ति के शैली-शिल्प को मनोनुरूप चुनने की स्वतन्त्रता सहज रूप से प्राप्त हो गई। किसी अमुक शास्त्रीय दृष्टि से किसी पात्र का या उसके कथन का तारतम्य यदि कहीं कुछ विसंगत भी लगे तो मैं यह निवेदन करना चाहूँगी कि मेरा मुख्य उद्देश्य मूलभाव के सम्प्रेषण का रहा है, अतः मैंने वही लिखा जिसकी अंतःसंगति मुझे स्वयंसिद्ध लगी। प्रत्येक पात्र मन की भूमिका पर सजीव उतर आया, किन्तु यह मेरी अक्षमता रही कि उस सजीव साकारता को मेरी लेखनी पूरी तरह से चित्रित नहीं कर पाई। हृदय में जो महाकाव्य लहराया है, उसे शिल्प की सीमा कहाँ बाँध पाई है ? उसमें तो डूबकर मौन हो जाना ही भक्ति की वास्तविक कृतार्थता को प्राप्त करना होता है। भगवान आदिनाथ की भक्ति की असीम गरिमा को पूरी गहराई से अनुभव करनेवाले मानतुङ्ग जैसे महान कवि ने अपनी असामर्थ्य को गद्‌गद् भाव से व्यक्त कर, जब आत्म-संतोष अनुभव किया तो मेरे कृतित्व की गिनती ही कहाँ ? हिन्दी छंद में पंडित हेमराज ने उसका अनुवाद इस प्रकार किया है :

मैं शठ सुधी हँसन को धाम
मुझ तव-भक्ति बुलावै राम।
ज्यों पिक अंब-कली परभाव
मधु-ऋतु मधुर करै आराव।

विन्ध्यगिरि के शिखर पर मुक्त आकाश के नीचे एक हज़ार वर्ष से खड़ी भगवान बाहुबली की तपस्यारत मूर्ति के दर्शन करते हुए मैंने बार-बार अनुभव किया है कि यह मूर्ति दसों दिशाओं में अद्‌भुत शान्ति, समता और स्निग्ध वीतरागता की जो ऊर्जा प्रसारित कर रही है, उसे पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और वनस्पतियों के समावेश ने, चैतन्य शक्ति के चरणों को प्रक्षालित करके उत्पन्न किया है। इसीलिए मूर्ति का शून्य ध्वनि-नाद सहज सम्बोधन द्वारा, प्रत्येक आत्मा में निहित ऊर्ध्वगामी क्षमता का संदेश तरंगित कर, आत्मविभोर कर जाता है। कैसी अनिर्वचनीय है उस आनन्द की अनुभूति !

इस काव्य-नाटक के प्रथम खण्ड में, भगवान बाहुबली का जीवन-कथानक समाप्त हो जाता है, पर उनकी तपोपूत रश्मियों का प्रसार अनेकानेक काल-खण्डों को युग-युगान्तर पार तक उद्दीप्त करता रहा है। उस उद्दीप्त दीपशिखा की एक आलोक-किरण वर्तमान के उन पक्षों पर भी पड़ती दीखती है, जो भारत के महान सम्राट चन्द्रगुप्त से सम्बन्धित हैं।

यह जाना हुआ तथ्य है कि अपने अन्तिम दिनों में सम्राट चन्द्रगुप्त ने जैन-मुनि दीक्षा धारण की थी। उत्तर भारत में पड़नेवाले महा अकाल की विषम स्थिति में वे जैन आचार्य भद्रबाहु के संघ के साथ दक्षिण आये थे। सम्राट चन्द्रगुप्त ने जिस पर्वत पर अपना समाधिमरण थापा था, वही आज श्रवणबेलगोल में चन्द्र गिरि पर्वत के नाम से प्रसिद्ध है।

इसी क्रम और पृष्ठभूमि में, इतिहास के पन्नों पर लिखे कुछ और भी अक्षर अधिक चमक उठते हैं। वे अक्षर जैसे यह रहस्य उद्‌भासित करते हैं :

महाराज सम्राट चन्द्रगुप्त अनेकानेक प्रदेशों पर विजय प्राप्त कर, तक्षशिला (भारत की उत्तर-पश्चिमी सीमा पर स्थित नगर) आये। वहाँ उन्हें एक आध्यात्मिक स्फुरण की प्रतीति हुई। तक्षशिला, करुणा और अहिंसा के परिवेश की, श्रमण और बौद्ध संस्कृति का प्रतिनिधित्व करती मुख्य स्थली थी। महाराज चन्द्रगुप्त उस स्थल के भी दर्शन करने गये, जहाँ आदियुग में चक्रवर्ती भरत ने अपने छोटे भाई बाहुबली की स्मृति में विशालकाय पन्ने की मूर्ति की स्थापना की थी। उन्होंने श्रमणों के मुख से भरत-बाहुबली कथानक भी सुना। भगवान बाहुबली और चक्रवर्ती भरत की कथा सम्राट चन्द्रगुप्त के हृदय में अंकित हो गई। उनके अपने जीवन में अनेकों विजय-अभियानों के पश्चात् भी, जो एक आकुलता बनी हुई थी, उससे त्राण पाने का पथ बाहुबली मूर्ति-स्थल के दर्शनों ने इंगित कर दिया। संयोगवश उसी समय जैनाचार्य स्वामी भद्रबाहु का अपने संघ सहित, चन्द्रगुप्त की राजधानी पाटलीपुत्र में आगमन हुआ।...सम्राट ने उनसे जैन मुनित्व की दीक्षा ली और वे उनके संघ के साथ भारत के उस गिरि प्रदेश में साधनारत हुए, जो अब श्रवण-बेलगोल में चन्द्रगिरि नाम से जाना जाता है।

मुनि चन्द्रगुप्त चन्द्रगिरि पर्वत पर ध्यानस्थ बैठते थे तो सम्मुख विन्ध्यगिरि का शिखर उनकी दृष्टि में भगवान बाहुबली की प्रतिमा के मस्तक रूप में झलकता था। चन्द्रगुप्त मुनि की इस दृष्टि की मान्यता जन-साधारण में प्रचलित थी।

इसलिए कई सौ वर्ष बाद, सन् 981 में जब गंगवंश के सेनापति चामुण्डराय तक्षशिला में (आदियुग के पोदनपुर में) स्थित आदियुगीन बाहुबली प्रतिमा के दर्शन को चले, और विन्ध्य-चन्द्रगिरि की घाटी में विश्राम किया, तो स्वप्न में देवी कूष्माण्डिनी ने उसी शिखर की अतिशयता को अपनी वाणी द्वारा पुष्ट किया कि चामुण्डराय चन्द्रगिरि पर्वत पर खड़े होकर, विन्ध्यगिरि पर्वत के शिखर को स्वर्ण तीर से बेधें, तो वहाँ भगवान बाहुबली की मूर्ति का मस्तक प्रगट होगा।

प्रतिमा-निर्माण की कथा भी यही कहती है कि चामुण्डराय का तीर लगते ही विन्ध्यगिरि शिखर पर भगवान बाहुबली की प्रतिमा का मस्तक झलक उठा था।

इस प्रकार आदियुगीन घटनाओं का वर्तमान युग से एक सहज युक्तियुक्त तारतम्य बैठता है; यह तारतम्य केवल मेरी भावना की उपज है, या इसमें यथार्थ

के अंकुर भी हैं, इसका समाधान पुरातत्त्व-शोध का विषय अवश्य हो सकता है, किन्तु मेरी सामर्थ्य से बाहर।

इस काव्य-नाटक की शैली-शिल्प का गठन इस प्रकार है कि इसके प्रस्तुतीकरण में, निर्देशक देख लें कि भाव और छंद के अनुकूल किस स्थान पर गेय-संगीत, किस स्थान पर केवल वाद्य-संगीत और कहाँ नृत्य द्वारा अभिव्यक्ति और कहाँ नाटकीय काव्य-प्रेषण की विधा प्रयुक्त की जाए। इसलिए लिखित काव्य-नाटक का सम्पूर्ण मंचन नृत्य-नाटक (Dance Drama) के रूप में ही सम्भव है, जहाँ काव्य की पंक्तियों का रस, अर्थ, कथानक एवं चरित्रों का समुचित विकास हो सके। रचना की अभिव्यक्ति की सूक्ष्म संवेदनाओं का सम्पूर्ण ग्रहण तो सुधी पाठकों द्वारा ही हो सकता है। मंच-प्रस्तुति में अधिकतर, नृत्य, संगीत, ध्वनि, छाया और आलोक का प्रभावोत्पादक माध्यम, प्रधान हो जाने से वह (Ballet) बैले का रूप ले लेती हैं, जहाँ अभिनय, शब्द, या वार्ता गौण स्थान पाते हैं, यद्यपि काव्य-नाटक ही उसका समुचित आधार रहता है।

भगवान महावीर के 2500वें निर्वाण महोत्सव पर 'वर्धमान-रूपायन' के नाटकत्रयी में से काव्य-नाटक', 'दिव्य-ध्वनि-छंद', को देश की प्रसिद्ध सांस्कृतिक संस्था भारतीय कला केन्द्र, देहली ने बहुत सफलता के साथ मंचित किया था और उसकी व्यापक प्रशंसा हुई थी। 'महाप्राण बाहुबली' काव्य-नाटक को भी, वे अपने 50 कलाकारों द्वारा श्रवणबेलगोल में आयोजित सहस्राब्दि महामस्तकाभिषेक के पुनीत अवसर पर प्रस्तुत कर रहे हैं।

महाप्राण बाहुबली की रचना में एलाचार्य मुनिश्री विद्यानन्दजी महाराज, स्वस्तिश्री भट्टारक चारुकीर्ति स्वामीजी श्रवणबेलगोल व स्वस्तिश्री भट्टारक महाराज, मूडबद्री की आशीर्वाद-प्रेरणा, सम्बल रही है। उनके प्रति नमित हूँ। साहू श्रेयांसप्रसादजी के आत्मीय प्रोत्साहन ने मेरे इस प्रयत्न को साकारता दी, और 'अन्तर्द्वन्द्वों के पार' के लेखक श्री लक्ष्मीचन्द्र जैन के अभिन्न सामीप्य ने ही यह कृति सम्भव बनाई। ज्ञानपीठ के डॉ० गुलाबचन्द्र जैन ने बहुत तत्परता और लगन से इस पुस्तक को समय पर तैयार कराया। इनकी आभारी हूँ।

अन्त में अपने परिवेश के प्रति कृतज्ञ हूँ जो मुझे ऐसे शुभ सुलेखन में निमज्ज करता है कि लेखन के साथ-साथ आत्म-प्रक्षालन के पल भी प्राप्त होते हैं।

ज्येष्ठ पुत्र रवीन्द्र का जन्मदिन (वर्षगाँठ)
31-1-1981

—कुन्था जैन

प्रथम खण्ड

[आदिनाथ भगवान् की प्रतिमा का आभास अथवा भामण्डल, मंच के बीचों-बीच। आदिनाथ की आभा के सम्मुख अर्ध-चन्द्राकार पंक्ति बनाये इन्द्र, इन्द्राणी, राजा, रानी, देव-देवियाँ, किन्नर, सुसज्जित वस्त्रों में, सिर पर मुकुट धारण किये प्रणाम मुद्रा में खड़े हैं।]

पार्श्वस्वर : भक्तामर-प्रणत-मौलि मणि-प्रभाणा-
(प्रार्थना) मुद्योतकं दलित-पाप-तमो-वितानम्।
सम्यक् प्रणम्य-जिन-पाद-युगं युगादा-
वालम्बनं भवजले पततां जनानाम्॥

सुर-नत-मुकुट-रतन-छबि करें
अन्तर पाप-तिमिर सब हरें।
जिन-पद बंदूं मन-वच-काय
भव-जल पतित उद्धरन सहाय॥

[नाटक के सब पात्रों का मंच पर प्रवेश, धीरे-धीरे इन पार्श्व स्वरों पर। प्रार्थना ध्वनि के अंतिम चरण पर बाहुबली-स्तुति के स्वर उभरते हैं। आदिनाथ की स्तुति में झुके पात्र शनैः शनैः सीधे खड़े हो जाते हैं। आदिनाथ की मूर्ति का स्थान बाहुबली स्वामी की मूर्ति ले लेती है।]

जय बाहुबली, जय गण-नायक
जय आत्म-विजय के उच्च शृंग
जय युग-युग के आलोक मान
जय विश्व-विमोहन जय अनंग

जय जग की, जन की, पुण्य ऋद्धि,
जय पुरुष-श्रेष्ठ, साकार सिद्धि
जय धरणी-तल के शुभ्र गगन
जय आत्मलीन आनन्द रमण
जिनके अन्तस् का रुचिर सार
पाहन में बिम्बित चमत्कार
जिनके पद-रज के मरकत कण
पलकों से चुन हम लाये सुमन
गूँथे गाथा में पुलक-स्पन्द
अर्पित श्रद्धा-स्वर नृत्य छन्द।

(धीरे-धीरे मंच पर से प्रकाश मंद होता है। पात्रों का प्रस्थान। फिर एक पुरुष और एक नारी का मंच पर प्रवेश जिन्हें 'यथार्थ स्वप्न' और 'भक्ति-भावना' की नाम संज्ञा दे सकते हैं।)

पुरुष : मैं भक्ति-भीना स्वप्न हूँ
मेरी अलौकिक दृष्टि
काल-युग के पार मेरी
भावना की सृष्टि।

नारी : श्रद्धा, पुराण-पखों पर
विचरण करती मनमानी
स्वर्णिम किरणों से लिखती
युग-युग की कथा कहानी।

पुरुष : समय काल का चक्र अनोखा
तारतम्य मय कर्म
अकथ कल्पनातीत अवर्णित
घटनाओं का मर्म।
होता चरम शिखर पर सुख-
तो सुषमा-सुषमा काल
सुख घटते-घटते हो जाता
दुषमा-दुषमा काल।

नारी : जब सुषमा-सुषमा का युग था
भरत क्षेत्र में बिम्बित
जीवन की आवश्यकताएँ
कल्प वृक्ष अवलम्बित।

पुरुष : प्रकृति निहित परिवर्तन से जब
हुआ मनुज उद्विग्न
तब कुलकर मनु उपजे क्रमशः
मेंटे बाधा विघ्न।

पुरुष-नारी : नाभिराज ऐसे ही थे नृप
अति विशिष्ट जन श्रेष्ठ
विद्युत, वर्षा, धरती-सागर—
के खोले सब भेद।

(सामूहिक स्वर पार्श्व से, युगल स्वरों के साथ उभरता है)

सामूहिक-स्वर : नाभिराज थे अन्तिम कुलकर
मरुदेवी भार्या
नगरी प्रथम अयोध्या निर्मित
कंचनमय काया।
नाभिराज और मरुदेवी के—
पुत्र ऋषभ जनमे
गर्भ-जन्म कल्याणक उत्सव
इन्द्र शची हरषे।
मति, श्रुति, अवधि ज्ञानमय बालक
चन्द्र कला सम विकसित
स्वर्ण वर्ण तन, तीर्थंकर के
लक्षण से उद्भासित।
बाल किशोर अवस्था, उत्तर
विकसित युवा अवस्था
ऋषभदेव परिणीता थीं—
यशस्वती और सुनन्दा।

बनीं यशस्वति, सौ पुत्रों की माँ गरिमा नामी
भरत पुत्र वे ज्येष्ठ, और चतुरा पुत्री ब्राह्मी।
सुन्दरि सुता सुनन्दा की, सुत कामदेव साकार
बाहुबली की रूपश्रेष्ठता उपमा सीमा-पार।

दोनों स्वर : लो, युग अतीत के खोल पंख
आया उड़ान भर कर स्वच्छन्द
चमका दिगन्त में भक्ति-सूर्य
है ध्वनित बाहुबली यशो सूर्य।

[बाहुबली की प्रतिमा पूरे परदे पर आलोकित। शनैः-शनैः दृश्य परिवर्तन का प्रारम्भ। अयोध्या नगरी का दृश्य। ऋषभराज के राजमहल का सुसज्जित प्रांगण। चारों ओर सुन्दर आसन। बीच में उत्सव मनाने का स्थान। अनेक नर-नारी युगलों का नृत्य करते हुए प्रवेश]

नृत्य-गायन

बाहुबली हो गये किशोर
उत्सव की धूम !
अयोध्या में हर्ष की हिलोर
नाचे मन झूम।
बालकपन द्वार-पार
यौवन उद्यान खिला
पुष्पों की मोहकता
सौरभ संसार मिला।
वृक्ष-लता फहर रहे फूल
धरती को चूम।
कामदेव राजकुँवर, पूनम का चाँद
अधरों पै मुक्त हँसी, भृकुटि में बाँक
अन्तर में रहस्य की लहर रही घूम।

(आरती और तिलक लिये ब्राह्मी और सुन्दरी का प्रवेश)

पार्श्वस्वर : भैया के ज्योतिर्मय आनन मनुहार को
(कोरस के) : बहिनों ने नेह भरे दीपक उजाल लिये
चंचल आलोक-कण स्वर्ण-वर्ण वर्तिका
स्वस्तिक आकार तिलक, आंचल में ढाँप लिये।
ब्राह्मी-सुन्दरी : विभोर चित्त !
भैया के आनन की मुस्कान,
इन्द्रधनुष जैसे
उद्भासित कर जाये क्षितिज।
पुलकों के स्पन्दन की
कैसी मधु तान !

(नृत्य में सम्मिलित)

नृत्य-गायन : जन्म-दिवस का प्रकाश
छिटक रहा नव उजास
छूप-छांव केलि छुआ छूम
उत्सव की धूम, नाचे मन झूम।

(यशस्वती और सुनन्दा का प्रवेश)

पार्श्वस्वर : लो मोहमयी ममता, उमंगभरी आ रहीं
उल्लास की ऊर्मियाँ, तरंगित हो छा रहीं।
जननी हैं शोभिता सूर्य चन्द्र रश्मियाँ
भू-गगन गूंजती, शुभ रुचिर बधाईयाँ
बाहुबली, हो गये किशोर
वायु में बसंत की हिलोर।

रानी यशस्वती : मन मयूर पंख खोल उड़ रहा गगन
इन्द्र धनु सप्त वर्ण नृत्य में मगन

रानी सुनन्दा : माँ का वत्सल नीड़ छोड़
पंछी स्वच्छन्द
जीवन पथ चयन स्वयं
उड़ना निर्द्वन्द्व।

नृत्य-गायन : आया मंगल का पर्व
कुँवर युवकों के गर्व
पूर्ण पौरुष साकार, धन्य भूमि
उत्सव की धूम, नाचे मन झूम।

(दोनों जननी नृत्य में सम्मिलित)

[महाराज ऋषभ का, भरत, बाहुबली, वीर, युगल वीर आदि पुत्रों सहित क्रमशः प्रवेश। महाराज ऋषभ के प्रवेश होते ही पार्श्वस्वर गूंजता है]

पार्श्वस्वर : जयति-जयति ऋषभराज
कृत युग के सृजनहार
कर्म-भूमि के शृंगार
जन-जन का नमस्कार

(भरत का प्रवेश)

शोभा मणि मुकुट भरत
शीश पर ढरे चँवर
रूप के सरोवर में
खिले कमल अरुण अधर।

(बाहुबली का प्रवेश)

बाहुबली रूप तिलक
मस्तक पर दिव्य झलक
ज्ञानमय स्वरूप के
मनहारी चित्र-फलक।

(वृषभसेन, अच्युत, अनन्तवीर्य वीर आदि का प्रवेश)

पार्श्वस्वर : कुँवर ऋषभसेन अच्युत
अनन्त वीर्य, वीर,
अनन्य शौर्य आत्म-शक्तिके प्रतीक
स्वागत जय, स्वागत जय
भरत क्षेत्र भाग्योदय।

ऋषभदेव : (उपस्थित नागरिकों को लक्ष्य करते हुए)
साधुवाद धन्य हम
पुरजन, सब प्रिय जन के,
कितने कृतज्ञ हम।
हर्ष की तरंगिणी, भूमि पर बिखर रही
चेतना, कपाट खोल, वायु में थिरक रही
कर्म-बुद्धि के क्षितिज छू रहे असीम को
मन में प्रत्यक्ष हुए मर्म हैं परोक्ष जो।

(बाहुबली को आशीष देते हुए)

बाहुबली पुत्र, मंगल-
सृष्टि वरद, कार्य वरण!
बाहुबली आयु-पथ
युग का विकास-पग

साथ-साथ चढ़ रहे
सोपान-लक्ष्य प्राप्ति के।
जीवन का प्राण तत्त्व,
सजग, क्रिया शील चरण।

बाहुबली : प्रणमित हूँ चरणों में गुरुजन आचार्य प्रवर
ग्रहण करूँ शुभाशीष, धारूँ नत मस्तक पर
शब्द का धनी नहीं, तात, मात, बन्धु-जन
शक्ति, ओज, पर अबाध लाँघता अबूझ मन।
ऊर्जा के निर्झर करते निनाद
प्रति क्षण, कण-कण में ऊर्ध्वनाद।

भरत : आओ मेरे अनुज प्रिय,
वक्ष से लगाऊँ तुझे
कि प्राण-तत्त्व काँपे ना
किंचित् आकुलता
कोमल मन व्यापे ना।
दोनों हम एक प्राण
धरती पर सरसेंगे
भिन्न भिन्न देह किन्तु
समरस हो बरसेंगे।

बाहुबली : (भाई भरत के कंधे पर हाथ रखकर)
इसमें सन्देह कहाँ,
अग्रज भरतेश !
अनुभूति-परमाणु में
समरस उन्मेष
पर,
विस्मित स्तंभित मैं
अन्तर उद्गारों से,
छूट रहा सागर क्यों
भूमि के कगारों से ?
मैं बंधहीन, स्वाधीन, मुक्त
स्वेच्छा धारा तोड़ूँ मोड़ूँ
लहरें झकझोरें अन्तहीन,
तट से फिर क्यों सीमा जोड़ूँ ?

ऋषभ : रचना रहस्यमय मेरे इस पुत्र की
अद्‌भुत आकर्षणीय
धूप-छाँह, तरल ध्रौव्य
आनन में लुप्त लीन।
आदि अन्त, चढ़ उतर
लहर-लहर खेलते
दीप्त तन पर मचल
स्निग्धता सहेजते।
शुद्ध भाव अंग-अंग
रश्मि बिन्दु-सी तरंग।

यशस्वती : बलिहारी
पौरुष किशोर की
छवि अनन्य पर।
पुत्र अनुज बाहुबली नयनाभिराम
तेज की लावण्यमूर्ति सार्थक है नाम।
विजय छन्द-हार में सजाऊँ बाहु वक्ष पर
यशस्वती नाम निज निछारूँ मनोज पर।

(विजय छन्दहार पहनाती है)

सुनन्दा : कामरूप स्फूर्त तन, निज में प्रबुद्ध
बुद्धि में कुशाग्र किन्तु स्वातन्त्र्य मुग्ध
सूत्रों में गुम्फित, मोती कण्ठा पहनाऊँगी।
अक्षर आलोकित शुद्ध, तन से लिपटाऊँगी।

(मोती कण्ठा पहनाती है)

ब्राह्मी : (आरती करती हुई)
सूर्य चन्द्र-सी प्रदीप्त,
अगर-मगर आरती
बाहुबली भैया के
आनन पर वारती।

सुन्दरी : (तिलक करती हुई)
इन्द्रधनु वर्ण युक्त
ज्योतिर्मय तिलक भाल

हो प्रशस्त अग-जग में
चमके युगान्त काल।

ऋषभदेव : भरतेश बाहुबली युगल
पूरक पुरुषार्थ सबल।

(पार्श्व से सामूहिक गान के स्वर उभरते हैं)

पार्श्वस्वर : युग-युग युव-नायक तेजस्वी, बाहुबली शाश्वत
सूर्य चन्द्र मण्डल जिनकी आभा से भास्वित।

(पटाक्षेप)

दूसरा दृश्य

[बाहुबली अकेले उद्यान में टहल रहे हैं। पास में ही एक सरोवर है उसमें झाँककर चौंक-से जाते हैं।]

पार्श्वस्वर : दर्पण के माप में रूप क्या समाता ?
अन्तर-सौन्दर्य छलक, बाह्य को लजाता।
देखी परछाईं, जल राशियों में अंश-अंश
चेतना की तीव्रता से, सिहर उठा अंग-अंग।

बाहुबली : **(स्वगत)**
यह कौन है जल-छाया में
किसका प्रतिबिम्ब ?
बीस वर्ष पूर्ण किये, किसने इस भूमि पर ?
मैंने ? मुझ बाहुबली ने ?
निज अस्तित्व की अनुभूति होती
उन क्षण शृंखलाओं में
जब चेतना की वेग धार लहराती तन में
उतरती कहीं गहरे में
स्पर्श करती अनबूझ परमाणुओं को
जो आग-जाग दीपक से
आलोकित हो
प्रसारते प्रकाश ऐसा

कि आकार सीमा-बद्ध
रहता ही नहीं।
अस्तित्व की चेतना,
चेतना से दूर, बहुत दूर···
हो जाती, खो जाती।
पर, वह क्षण करवट बदल
दूसरे ही रूप में साकार हो आता
चेतना का एक और क्षण सामने आ जाता।
कर्त्तव्य और कर्म
तन-मन का धर्म
प्राणों की सत्ता
जीव की महत्ता।

(दो युवक-युवतियों का प्रवेश। एक-के-बाद एक दोनों उल्लास विह्वल स्वर में गाती हैं)

युवक-युवतियाँ : सरिताओं, सागर में, कल-कल का नाद
झरनों के पानी में प्राणमय हुलास
खींचता है लहर-लहर खेलने को जल
रोकता, भीरु मन, हो अति विकल
जल की प्रतिबिम्बित तरल वेग स्वच्छ
बूँद-बूँद प्रेम पाश बाँधता निर्द्वन्द
जोड़ें हम नाता, इस रुचिर
सेतु नीर से
कैसे ? यह प्रश्न है समक्ष
आपसे निदान पाने, आये हैं आशा ले
हे कुँवर बाहुबली,
जल-थल विज्ञान दक्ष !

बाहुबली : यह जल प्रमेय
है जलद श्रेय।
भू-खण्डों का सेतु अटल
व्यापार संस्कृति सूत्र सरल
निज भुज बल में बन्धुत्व भाव
भर
जल प्रवाह में छोड़ो नाव

(मटियाली गीत की धुन। पार्श्व में चप्पू चलने की ध्वनि। नाव चलने की नृत्य-मुद्रायें।)

श्वासों के नियमित संयम से
सागर-सरिता होंगे पार
तन-तरंग-गति, जल प्रपात-सी
पाहन पथ पर छल-छल धार।

(झरनों का स्वर। जहाजी बेड़ों की झाँकी। बैंड आदि का आभास।)

पार्श्वस्वर : निहित ऊर्जा नीर की,
विश्व-मानव-सभ्यता संचारिणी
बाहुबली, मनु पुत्र की प्रारम्भिकी
युग-युगों के पार
वरुणा शक्ति रूप विराजती।

(युवक-युवतियाँ नृत्य-नायन करती हैं)

युवक-युवतियाँ : शक्तियों के प्रतीक, बाहुबली धीर।
आदि-युगीन
प्रकृति जनित
पीर-हरण वीर।

बाहुबली : वन केहरि कुंजर वश में हों
तन-मन अनुप्राणित हुलसित हों
नर-नारी परस्परता प्रेरक
पर, निज व्यक्तित्व स्वयं सेवक
पुरुषार्थ-चेतना विजयी हो
भौमिक सर्वार्थसिद्धि नय हो।

(पटाक्षेप

[अयोध्या नगरी के राज-पथ पर भिन्न-भिन्न नगर-नागरिकों का प्रवेश।]

पार्श्वस्वर : वायु, अग्नि, जल-थल-आकाश
तत्त्वों का उपयोग विकास
ऋषभ देव के पुत्र-पुत्रियों—
ने पहुँचाया जन-जन पास।

दूसरा स्वर : कर्म-चेत पुरुषार्थ क्षेत्र
जीवन-यापन के सब उन्मान
उन्नति उन्मुख, संस्कृति सम्पद्
चढ़े शिखर अनगिन सोपान।

तीसरा स्वर : छन्द शास्त्र व्याकरण
अनायास वाङ्मय झरने से फूट पड़े
वाणी के कण-कण में मोती से टूट पड़े।

सामूहिक स्वर : **(युवक-युवकों के दल नाचते-गाते हुए)**
नगरी अयोध्या के रूप पर निखार
हाट-बाट सज गये, अनोखा शृंगार !

कृषक-गण : **(नृत्यरत)**
स्फूर्तिमय अंग-अंग
वायु में भरी उमंग
धरती की गोद में अन्न का भण्डार।

वणिक गण : **(नृत्यरत)**
करते व्यापार वणिज
होता सहयोग अधिक
श्रष्ठि-श्रेष्ठियाँ : प्रीतिमय रीतिगत सच्चा व्यवहार।

वीर-वीरांगनाएँ : **(नृत्यरत)**
बाँके ये धनुष वाण
विद्युत-सी खड्ग आभ
प्राणों की रक्षा का लेते हैं भार।

विद्वानगण-विदुषी : शाश्वत है गणित ज्ञान

नारियाँ : **(नृत्यरत)**
भ्रम-विहीन शुद्ध ध्यान।
हीरे की कणिका-सा ज्योतित निखार।

कलाकार व लेखक : रेखाओं, रंगों में

नर-नारी : **(नृत्यरत)**
लिपिका के छन्दों में
बोल उठे भाव-रहस मीठी अनुहार।

(नृत्य पूर्ण रूप से गतिमान)

(नृत्य की समाप्ति पर एक युवक-युवती युगल का प्रवेश)

सुनो, नगर नागरी
भव्य नर सुनो
सुनो श्रेष्ठी वणिक्
सुनो, विज्ञानविद्
कला-चतुर, कृषक-वृन्द
सुनो, वीर युद्ध-सिद्ध !

(सब ध्यान देकर सुनते हैं)

युवक : महाराज ऋषभदेव—
का निमन्त्रण विशेष
राज्याभिषेक है कुंवर भरतेश का
वे स्वयं ले रहे, पंथ वैराग्य का।

नागरी-नागरिक : क्या कहा ? ऋषभदेव ले रहे वैराग्य !
अकस्मात् ऐसा क्यों ?

युवती : हो रहा था नृत्योत्सव ऋषभराज प्रांगण में
लुप्त हुई नृत्य-रत अप्सरा नीलांजना
नर्तकी-प्राणान्त का
क्षण पहुँच आया था।
इन्द्र ने बिछाया जाल
दुखद घटना ढकने को
भेजी और अप्सरा, जैसी नीलांजना
भ्रमित किया जन-मन को।
किन्तु ऋषभराज से सत्य न छिपा रहा
जीवन-मरीचिका मर्म मन छू गया।
माया और शंका के तार हुए छिन्न-भिन्न
जाग उठा भाव वैराग्य का उसी छिन।

सब नागरिक : (विह्वल हो)
सब चलें वहीं
है ठौर वहीं
अँसुवन से पग-प्रक्षाल करें
विह्वल मन कैसे शान्त करें

(सबका प्रस्थान)

[राज्य सिंहासन रिक्त है। ऋषभदेव सिंहासन के निकट खड़े हैं। भरत, बाहुबली, सुनन्दा, यशस्वती राज-पुरोहित, मन्त्री व अन्य पुत्र चिन्ताशील मुद्रा में। पार्श्वस्वर गूँजते हैं]

पार्श्वस्वर : महाराज ऋषभदेव की जय।
जय भरत क्षेत्र पुण्यभूमि।
आज की सभा विशेष
अति महत्त्वमय उद्देश्य

ऋषभदेव : बन्धुगण, आत्मीय जन
आज का विशेष मिलन
अन्तर का जागरण
बोलता, यह वचन।

(भरत से)

लक्षण चक्रवर्ती के अंग-अंग सोहते
आत्मिक स्फुलिंग, झर-झर मन मोहते।
पुत्र भरत !
तुमको, भौतिक संभार उठाना है
धर्म-कर्म वैराग्य राग की,
वीणा के संयुक्त स्वरों में
समता लय उपजाना है।

भरत : तात का आशीष माथ
वचन श्रवण अन्तर में
स्पन्दित हो, मन्त्र बने
मानस में दोल रहे।
अंग-अंग इन्द्रियाँ
चेतना-समुद्र में
डुबकियाँ लगा रहीं
तैरती आ रहीं
मुझमें समा रहीं।

ऋषभदेव : धन्य हूँ अकम्प हूँ,
अन्तः पुकार के
प्रेरणा प्रवाह को—
थामूँ, न रोकूँगा।

मुक्त गन रमूंगा
शुद्ध, ध्यान विचरण—
का, पथ गह सकूंगा।

सुनन्दा : महामहिम स्वामी !
यह मर्ममयी वाणी सुन
चित्त क्यों अधीर होता ?
कोई अस्पृष्ट रहस
मन्द चरण
रिक्त वरण
मानस में आ सोता !

ऋषभदेव : चन्द्रमुखि प्रिये,
जननी मनोज की !
रूप का दिव्य द्रव्य
काम के द्वार से,
खींचता प्रवेश में
लौकिक के पार।
आत्मिक अनुभूति शक्ति
आँकती भविष्य का गोपनीय सार।

यशस्वती : स्वामी मुखारविन्द ज्योतिर्मय चमक रहा
सूर्य-सा दमक रहा
अन्तर प्रतिबिम्बित हो नेत्रों में प्रगट रहा
चरणों की धूलि लूँ, ऐसा मन उमंग रहा।

ऋषभदेव : संवेदनशील हृदय—शुभास्मिता यशस्वती !
अन्तर वैराग्य मेरा, बिखर रहा वायु में,
छू रहा समष्टि को
हो रहा प्रविष्ट सहज तुममें, सुनन्दा में,
बाहुबली-भरत में,
आ गया समय योग।

(पुरोहित से)

राज-तिलक-शोभित हो कुँवर भरतेश माथ

(अपने माथे का मुकुट भरत को पहनाते हुए)

राज्याभिषेक हो अयोध्या-नरेश का।

पार्श्वस्वर : जय भरतेश, जय अयोध्या-नरेश !
जय भारत देश !

ऋषभदेव : **(बाहुबली की ओर उन्मुख)**
बाहुबलि, करो आश्वसित
(युवराज को मुकुट पहनाते हुए)
धारो युवराज मुकुट
पोदनपुर राज्य-नगर
तुम से हो अनुशासित।
अन्य राज्य, पुर-नगर
शासित हों वीर, अनन्त वीर्य, वीरभद्र द्वारा।
मेरा पथ निर्जन का
ऐकिक एकान्त का
निर्वसन अल्पाहार,
(ऋषभ आभूषण उतारते हैं)
चिन्तन और ध्यान का।
(सारी सभा नमन-मुद्रा में। शनैः शनैः अन्धकार। छाया में ऋषभनाथ, दिगम्बर अवस्था में वन-पथ पर।)

पार्श्वस्वर : छोड़ गये ऋषभराज, लौकिक सब बाँध-बन्ध
चले गये आदि प्रभु खोजने निज आत्म पन्थ।
(गूँजते स्वर)
चत्तारि सरणं पव्वज्जामि
अरहन्ते सरणं पव्वज्जामि
सिद्धे सरणं पव्वज्जामि
साहू सरणं पव्वज्जामि
केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि।

(पटाक्षेप)

[अयोध्या नगरी का राज-पथ]

पार्श्वस्वर : बीत गये वर्ष दिन, भिन्न-भिन्न राह पर
तीन समाचार शुभ, आ मिले एक प्रहर।
(एक नागरिक युगल का प्रवेश, पूजा की वेश-भूषा में)

युवक : आज हो गये केवलज्ञानी, ऋषभदेव भगवान।
ज्ञान-प्रखर की दिव्य-ज्योति से आलोकित जग-प्राण।

युवती : जय तीर्थंकर, जय आदिनाथ
जय ऋषभदेव, है नमित माथ।

(केवलज्ञान प्रकट होने की सूचक वाद्यध्वनि। भगवान को नमस्कार करने की मुद्रा में प्रस्थान)

(सुसज्जित वेश-भूषा में दो युवतियों का प्रवेश)

एक युवती : पुत्र-रत्न जन्मा है महारानी कोख से
भरत के, भारत का भावी युवराज !

दूसरी युवती : मंगल बधाई शुभ, मंगल बधाई
नगरी में आनन्द अरुणाई छाई।

(प्रस्थान)

(हर्ष सूचक वाद्यध्वनि। एक घोषक के साथ दो राजपुरुषों का प्रवेश। नगाड़े पर चोट देकर उद्घोषणा।)

राजपुरुष 1 : प्रगटा है राज-आयुधशाला में चक्ररत्न

राजपुरुष 2 : अर्थ क्या है ?

राजपुरुष 1 : देता आदेश यह,
दिग्विजय प्राप्त करें स्वामी भरतेश
बनें चक्रवर्ती अब अयोध्या नरेश।

(दोनों राजपुरुष बार-बार दुहराते हैं।)

(युद्ध-सूचक वाद्यध्वनि तथा विजयोल्लास हर्ष-ध्वनि। शनैः शनैः मंच पर अँधेरा। मंच पर पुनः आलोक। युवक-युवती युगल वार्ता-रत।)

युवक : चक्ररत्न आदेश
से,
तत्पर भरतेश ने
भेजे सन्देश।
जम्बू प्रदेश
के,
जितने नरेश।
या तो स्वीकार करें कि भरतराज चक्रवर्ती
अन्यथा रणभूमि में दिखाएँ निज शौर्य शक्ति।

युवती : युद्ध ठानना
व्यर्थ सामना

हिंसा, हानि,
हार मानना।
इसीलिए,
देश-देश के शासक सब
अर्पित भरत राज्य को सत्र।
चक्र दण्ड सब दैवी आयुध
चूर चूर करने विद्रोह।
किसका ऐसा साहस जो
अपने प्राणों का छोड़े मोह।

युवक : ऋषभदेव के अन्य पुत्र
शासक स्वतन्त्र
कैसे हों पराधीन ?
कैसे लें शरण किसी
शासक महीप की ?
पहुँचे, जहाँ तीर्थंकर पिता थे विराजमान
समवसरण ज्योति जहाँ
जागृत धर्म-दीप की।

युवती : भाई हुए मुनिव्रती, कैसी यह होनहार !
चक्र क्यों रुका हुआ अयोध्या के मुख्य द्वार ?

युवक : बाहुबली कामदेव, निर्विवाद नृप अनूप
उनको आधीन करें, तब हों भरत चक्र-भूप

युवती : पोदनपुर, महाराज बाहुबलि,
कैसे भूल गये भरतेश।
पराक्रमी वे, महाबली वे
छिपा कहीं मन में विद्वेष ?

युवक : बात विपरीत है।
बाहुबली भरत में प्रीति ही नीति है।
सम्भ्रम रहा हृदय में, दोनों हैं एक
भूले भरतेश यों, व्यवहार की उपचार टेक।

युवती : कैसी विषम स्थिति
चक्र ने उत्पन्न की
भाई से भाई की, भावना विरक्ति की।
होगा परिणाम क्या ?

युवक : विवश हो, भेजा है दूत भरतेश ने
देने निमन्त्रण कि बाहुबली भ्रात अनुज—
हर्षित हो आयें ।
भरत हुए दिग्विजयी, यह उत्सव मनायें ।

युवती : होता आभास
वायु-मण्डल में त्रास
बाहुबली, स्वतन्त्रता
हो सकें, अलग-अलग
असम्भव है बात !

दोनों : बाहुबली मुक्त मन, मन्मथ महेश
कृतभूमि युवराज प्रतिष्ठित
पूर्ण ओज उन्मेष ।

(प्रस्थान । मंच पर शनैः-शनैः अँधेरा)

(पटाक्षेप)

[पोदनपुर राज्य । प्रभात का समय । पार्श्व से चारणों के स्वर, भैरवी राग में]

पार्श्वस्वर : बाहुबली नाथ महाराज से सुरक्षिता
शान्ति, विश्राम, कर्मनिष्ठ की निमज्जिता ।
पोदनपुरी वरिष्ठा, स्वातन्त्र्य सुष्मिता
प्राकृतिक श्यामा, शृंगार से सुसज्जिता ।

(पोदनपुर, राजभवन का एक खण्ड । सिंहासन रिक्त है । द्वार पर दोनों ओर द्वारपाल । महामन्त्री एवं सेनापति विचारमग्न घूमते, परस्पर वार्तालाप कर रहे हैं ।)

सेनापति : महामन्त्री !
एक ओर बाहुबली-राज्य की स्वतन्त्र कीर्ति
दूसरे महामहिम भरत बनें चक्रवर्ती
कैसा उलझाव है
ग्रन्थि में तनाव है !

महामन्त्री : सेनापति !
क्या दूँ मैं मन्त्रणा, प्रभु स्वयं प्रबुद्ध हैं
व्यक्ति हैं स्वतन्त्र, इस मन्त्र से विमुग्ध हैं
मुक्त प्राण, मुक्त भाव, मुक्त प्रत्येक श्वास

नागरिक प्रत्येक में मुक्त मन भरा उलास
बन्धन आधीनता का कैसे स्वीकारेंगे
भाई से युद्ध हो, यह भाव भी नकारेंगे ?

पार्श्वस्वर : जय बाहुबली ! जय गण-नायक !
जय पोदनपुर, जय मुक्त पवन ।
(राजा बाहुबली का प्रवेश । साथ में चंवर वाहक । बाहुबली सिंहासन पर आसीन होते हैं । महामन्त्री और सेनापति भी अपना-अपना आसन लेते हैं ।)

महामन्त्री : स्वामिन्, क्षमा करें ।
प्रभात का उदय आज
और दिनों से भिन्न हुआ ।
प्राकृतिक सम्पत् का
शाश्वत विमल स्वच्छ रूप
मेघों से खिन्न हुआ ।

बाहुबली : कहने में संकोच करो मत, बन्धु मेरे
दूत अयोध्या से लाया है मेघ घनेरे ।
उनको वर्षा करने दो इस पोदनपुर में
देखूँ जल तूफानी, या अमृत की बूँदें ।

महामन्त्री : अमृत—तूफ़ान, दोनों का आभास
कैसे हुआ नाथ ?
दूत तो अतिथि-गृह में
कर रहा आवास !

बाहुबली : अन्तरंग की तरंग
छू रही चेतना-कोष्ठ के अबूझ अंग ।
(चिन्ताशील मुद्रा में । कुछ ठहर कर)
हों प्रस्तुत, जो आये अतिथि
पुरी अयोध्या राज्य-प्रतिनिधि
नहीं हैं वे दूत मात्र
हैं गुणी, चतुर, विश्वासपात्र ।
(अयोध्या के राजदूत का सम्मान सहित प्रवेश)

पार्श्वस्वर : जय पुरी अयोध्या जय पोदनपुर
जय बाहुबली ! जय जय पोदनपुर

राजदूत : **(बाहुबली को प्रणाम करते हुए)**
जय बाहुबलि नरेश, जय पोदनपुर महेश ।

(आगे बढ़कर)

सेनापति : स्वागत सुजान !
स्वागत अयोध्या-राज-दूत !
जय भरत-बाहुबली भ्रात सूत्र !
(दूत आसन ग्रहण करता है। फिर कुछ ठहरकर, खड़ा होकर)

राजदूत : प्रभु लाया हूँ शुभ समाचार
भाई अग्रज ने भेजा है
लघुभ्राता को स्नेह प्यार।
भरतेश्वर ने विजय किया है जम्बूद्वीप महान्
पूर्ण राज्य क्षेत्रों में गुंजित भरतेश्वर गुणगान।
भिन्न राज्य तन्त्रों के मनके पिरे एक ही सूत्र
मुक्ता-मणि हैं आप, चलें तो हो माला परिपूर।

बाहुबली : धन्य हुआ, अग्रज का गौरव गुण-गान सुन
भूले भरत अनुज को भू-विजय आसक्त धुन।
पूरी सराहना तुम्हारी वाक्-पटुता की
भरत चक्रवर्ती की दूर-दृष्टिगतिता की
किन्तु सुनो, दूत प्रवर !
भाई का निमन्त्रण फूल, आज बना हृदय शूल।
(स्वर बदलकर गरजते हुए)
स्मरण किया भ्रात ने चक्रवर्ती बनने को
पोदनपुर शासन यों शरणागत करने को ?

राजदूत : तेज रूप आपका सूर्य के समान
भाव-भंगिमाओं में स्वतन्त्रता प्रधान
किन्तु भरतराज का चक्रवर्ती विधान
शासक के गौरव में भूमि-कर्म है महान
चक्र का विरोध, प्रभु होगा विनाशक
दण्डरत्न अनवरत निर्विवाद घातक।

बाहुबली : चक्रवर्ती विधान
भूमि-कर्म है महान
कैसा यह भ्रम—
यदि भू पर प्रभुत्व
देता गौरव गुरुत्व !
तो कुम्हार चाक-दण्ड

और भरत चक्र-दण्ड
करते समान कर्म।
जायेंगे न बाहुबली, चक्री-प्रणाम को
कह दो जा, वचन ये अपने ललाम को।

राजदूत : रोष महाराज का न देता कुछ भी निदान
शक्तियाँ दोनों प्रबल, सोचें प्रभु समाधान।

बाहुबली : **(दृढ़ निश्चय से)**
करे भरत चक्रवर्तित्व का संवरण
अथवा
मेंट पोदनपुरी, प्रांगण रण।

राजदूत : बाहुबली महाराज, खोयें न विवेक
व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की इतनी कुटेक !
भरतेश राज्य आज एक से अनेक
सेना पराक्रमी, शक्ति अतिरेक।

महामन्त्री : **(बाहुबली से)**
महाराज क्षमा करें,
आज्ञा दें बोलने की।
दूत का यह साहस कि बोले वचन अनगिनत
सन्देश के अतिरिक्त ?
(दूत से)
अयोध्या के दूत !
भूलो ना रेख निज दूत कर्तव्य की।
दे दिया संदेश
पा लिया उत्तर
अब रहा क्या शेष ?
एक दिन विश्राम कर
आतिथ्य स्वीकार कर
शीघ्र सूचित करो अयोध्या नरेश को,
कि पोदनपुरी, बाहुबली-रक्षिता स्वाधीन है
भरत चक्रवर्ती-पद उसके आधीन है।

बाहुबली : दूत वेश में प्रस्तुत ये अग्रज भाई की ओर से
इसीलिए हैं पात्र क्षमा के, मुक्त नियम की डोर से।
पोदनपुर राज्य पिता ऋषभदेव सौंप गये
सुत की सामर्थ्य आन-सान पर चढ़ा गये।

स्वतन्त्रता विकास-शक्ति छोड़ दूँ क्यों,
अग्रज हैं भरत, सो निजत्व दूँ खो ?
(स्वर बदलकर)
भाई को देना, भाई का प्रणाम
राजाधिराज को, निमन्त्रण संग्राम।
(दूत प्रणाम करता हुआ, प्रस्थान करता है)
(मंच पर शनैः-शनैः अँधेरा)

पार्श्वस्वर-1 : बाहुबली के उत्तर से, भरत हृदय बिलखा रोया
शैशव संचित प्रीति कोष, खाली, सूना, रीता-खोया।
स्वर-2 : किन्तु चक्रवर्तित्व उन्मेष, अति उत्कट हो ऐंठा
भौतिक जग का उन्नति-पथ, बस भू-प्रभुत्व बन बैठा !
(मच पर शनैः शनैः प्रकाश। युद्ध-वाद्यों की मन्द ध्वनि। मंथर गति चलते-चलते भरत का मंच पर प्रवेश, स्वयं में खोये से। शनैः शनैः सैनिक आदि भी मंच पर आ रहे हैं। रणभेरी का स्वर तीव्र होता है।)
भरत : **(स्वगत)** मैं भरत, वह बाहुबली
आत्मीय अंश एक ही
पर कैसे दोनों अड़े-खड़े
घोर हिंसा, प्राण व्याकुल
कौन कर्म दुर्वार पड़े !

(भरत अपने आपको बाह्यमुखी कर उत्तेजित स्वर में)
भरत : कैसा सन्ताप, कायर
तन मन को छेदता
बुद्धि का तीव्र चेत
पीछे न देखता।

(स्वर में ललकार भर युद्ध के लिए तत्पर, गरजते हुए)
भरत : सैनिको, शूरवीरो !
शक्तियाँ असीम भरो
बाहुबली राज्य से आयी ललकार
चक्र की आधीनता है नहीं स्वीकार
युद्ध यह भयावह, भाई का भाई से
यातना है दो-मुखी, चूके ना साहस।

(युद्ध की तीव्र वाद्य-ध्वनियों सहित, भरत और सैनिकों का युद्ध के लिए प्रस्थान।)

(दूसरी ओर से बाहुबली का प्रवेश। सैनिकगण साथ हैं। मंद प्रकाश)

बाहुबली : चक्रवर्ती हो गये अनगिनत विश्व में

अन्तर स्वर : **(स्वगत)** नाम और प्रभुत्व की दुर्दम आकांक्षा ?
किन्तु भरत निर्विकार, पुत्र केवलज्ञानी का
भाई का दमन करने
हिंसात्मक रण करने
क्यों हुआ बाध्य ?

अन्तर स्वर-2 : और मैं भी तो बाहुबली
सुत केवलज्ञानी का
स्वतन्त्रता की आन पर
हिंसा संग्राम में फंसता ही जा रहा
नहीं क्या स्वार्थ ?

(बाहुबली के सेनाध्यक्ष व शूरवीरों का तीव्रगति से प्रवेश)

महाराज—
सेना अयोध्या से आ रही बाढ़-सी
भरत स्वयं साथ।
हाथी, रथ, घोड़े सैन्य
तत्पर हैं, युद्ध को—
आज्ञा दें नाथ !

(बाहुबली चौंक कर, जैसे यद्ध के लिए जाग उठे हों)

बाहुबली : कूच करो उसी दिशा में, भेंट करूँ भाई से
वर्षों में मिलन प्रथम, वह भी रण-आँगन में।

उत्तेजित स्वर : वीरो, सेनापतियो,
चेते सत् वीरता
होड़ में हैं प्राण किन्तु, रक्षित स्वाधीनता।

(युद्ध के लिए प्रस्थान अन्धकार शनैः शनैः)

(शनैः शनैः मंच पर प्रकाश)

(अयोध्या व पोदनपुर के सेनाध्यक्ष, महामन्त्री विचार-विमर्श मुद्रा में खड़े हैं)

महामन्त्री अयोध्या : यह स्थल दोनों के संगम का
युद्ध-भेरियों के गुंजन का
यहीं रहें प्रतीक्षा रत
आयेंगे बाहुबली भरत।

महामन्त्री पोदनपुर : महामन्त्री अयोध्यापुर
कृतज्ञ हूँ आपका।
सम्मति हेतु आमन्त्रित कर,
किया कल्याण—
प्रजा, राजा, साम्राज्य का।

(चारों वहाँ खड़े हैं, कि दोनों ओर से बाहुबली और भरत का अपने सैनिकों सहित प्रवेश। दोनों भाई एक-दूसरे को देख परस्पर प्रेमविह्वल हो वक्ष से लग जाते हैं। बाहुबली भरत के चरण छूते हैं। भरत उनका माथा चूमते हैं। दूसरे ही क्षण झटककर दो-दो पग पीछे हो जाते हैं। बीच में सेनाध्यक्ष और मन्त्रीगण आ खड़े होते हैं।)

सेनापति पोदनपुर : (हाथ ऊपर उठाकर)
भाग्य की मरीचिका
की, रुके यह विभीषिका

सेनापति अयोध्या : (आगे बढ़कर)
महाराज ! निवेदन श्री चरणों में
इस हिंसा के बाबण्डर को रोके थामें आर्य यहीं
ऋषभ केवली के पुत्रों के शोभाप्रद यह कार्य नहीं।
(भरत और बाहुबली चकित हो एक-दूसरे को देखते हैं)

भरत : वत्स ! ना करो विलम्ब
प्रस्तुत करो समन्वय युक्ति
मानस का द्वन्द्व मिटे
हिंसा से मिले मुक्ति।

महामन्त्री अयोध्या : सेनापति दोनों नगरों के
मन्त्रीगण और सभासद
प्रजा, नागरिक पोदनपुर के
और अयोध्या सैनिक पक्ष !
सर्व-सम्मति हुई मन्त्रणा
हिंसा युद्ध व्यर्थ यन्त्रणा

भाई-भाई का संघर्ष
सैनिक प्राण गंवायें व्यर्थ
राजा द्वय कर लें निर्णय
कौन पराजित, किसकी जय।

बाहुबली : साधुवाद ! धन्यवाद !
श्रेष्ठ यही समाधान
स्पष्ट करें मन्त्रीगण
किस प्रकार हो विधान ?

सेनापति पोदनपुर : दोनों परस्पर वीर भाई, हिंसा रहित युद्ध करें
दृष्टियुद्ध, जलयुद्ध, मल्लयुद्ध—
तीनों में, स्वयं जूझ
विजय वरमाल वरें।

भरत-बाहुबली : **(दोनों साथ-साथ)**
धन्य नागरिक प्रजा बन्धुओ !
हिंसा-ताण्डव रोक लिया
राजा नायक की क्षमता को
निर्णय का प्रतिबोध दिया।
प्रस्तुत हम प्रतियोगी इस पल
सेनाएँ विश्राम करें
दर्शक होंगे नगर-नागरिक
राजा द्वय संग्राम करें।

सारी प्रजा : जय विभूति द्वय भरत बाहुबली !
जय ऋषभदेव जय प्रजापति !

(शनैः शनैः अँधेरा)

(पोदनपुर—अयोध्या के मार्ग में विश्रामस्थल, रणवास गृह। ब्राह्मी और सुन्दरी का प्रवेश)

ब्राह्मी : बहिन सुन्दरी !
आज पिता की शिक्षा दीक्षा
कठिन कसौटी पर कस आई
भइया भरत बाहुबली शक्ति
आज परस्पर यों टकराई।

सुन्दरी : **(स्वप्न में उतरी-सी)**
ब्राह्मी बहिन !
यह अकल्पित हो रहा है

चित्त मेरा दूसरे ही
लोक में जा खो रहा है।

ब्राह्मी : सुन्दरि ! तेरी चमक हीरा प्रखर !
जाग, देख यथार्थ को। धुंध मन से दूर कर।

सुन्दरी : **(सजग हो)**
सभ्यता का चरण-पग नाना दिशाएँ खोजता है—
राज्य चक्र विधान की संपुष्टता में
भू-प्रगति परिपूर्णता में
व्यक्ति शक्ति विकासता में
दृष्टियों की भिन्नता का द्वन्द्व उत्कट बोलता है।
(इसी बीच में अयोध्या-साम्राज्ञी पोदनपुर महारानी का प्रवेश। दृष्टि पड़ते ही ब्राह्मी और सुन्दरी उनका प्रेम-अभिवादन करती हैं।)

अयोध्या साम्राज्ञी : प्रेम-प्रीति का नभ, मेघों से आच्छादित हो
सूर्य उदय ऐसा भी होगा, कब सोचा था ?
एक-प्राण दो भाई होंगे युद्ध रथी
कैसी विडम्बना !

पोदनपुर महारानी : भू-पालन का मन्त्र
बने सौभाग्य का षड्यन्त्र
कभी क्या मन में कौंधा ?
(दोनों दुखी और वेदनामयी दिखायी देती हैं। सुन्दरी ढाढस देती हुई स्वप्न-गम्भीर मुद्रा में)

सुन्दरी : यह युद्ध नहीं सामान्य
कि छोटे वृत्त रेख में बाँध, हृदय से परखें हम
यह परिस्थिति जड़ अदृश्य
स-साहस निरखें हम
अनुभव, अद्भुत अनुभूति गहन
इस भावभूमि पर विचरें हम।
प्रश्न है कि—
एकछत्राधीन हो मानव समन्वय
श्रेष्ठतम बल-बुद्धि की आधीनता में।
या कि
हर प्राणी निजी स्वाधीनता से
सर्वहित कल्याण का साधन बने।

ब्राह्मी : बाहुबली भरतेश की संघर्ष-पीड़ा
युग-युगों के पार तक सन्देश देगी
आदि युग से व्याप्त जीवन सत्व की
यह समस्या क्या कभी निःशेष होगी ?

साध्वीजी, महारानी : आदि पुरुष की संतति के प्रति
मोह राग की देकर आहुति
मानव के मानस का वृत्त
फैले नभ के छोरों तक
स्पर्श करे कल्याणक सत् धनु
बरसा दे शाश्वत अक्षत ।

(मंच पर शनैः-शनैः अँधेरा)

[मंच पर प्रकाश । युद्ध-भूमि । निकट ही सरोवर । दोनों ओर के नगर-निवासियों की भीड़ । दोनों महामन्त्री सम्मुख आकर घोषणा करते हैं ।]

महामन्त्री द्वय : विजय काव्य गूंजेगा
दृष्टि, जल, मल्ल युद्ध छन्द्व
तीनों पश्चात्, निश्चित विराम रेख
द्वन्द्व फिर बन्द ।

(जयकार की ध्वनि के साथ एक ओर से भरत, दूसरी ओर से बाहुबली का प्रवेश । दोनों एक-दूसरे को देखते ही सहज आलिंगन में बद्ध हो, फिर युद्ध को तत्पर)

नागरिक अयोध्या : जय-जयकार ! पोदनपुर नरेश बाहुबली की
जय भरतेश चक्रवर्ती महाराज की

नागरिक पोदनपुर : जय-जयकार अयोध्यापति भरतेश की
जय बाहुबली महाराज, स्वतन्त्रता-नरेश की ।

सेनापति अयोध्या : दो भाई—दो नरेश
करें दृष्टि युद्ध निजगत आदेश

(वाद्य-यन्त्रों की ध्वनि । नृत्य-मुद्राओं द्वारा भरत और बाहुबली का नेत्रयुद्ध । अन्त में भरत नेत्र मूँद लेते हैं । बाहुबली विस्फारित नेत्रों से बिना पलक झपकाये एकटक भरत पर दृष्टि टिकाये रहते हैं । तभी बाहुबली पक्ष से 'जय बाहुबली', 'जय कामदेव', 'जय पोदनपुर नरेश' के जयघोषों की गूँज, भरत का पक्ष उदास मुद्रा में)

सेनापति पोदमपुर : हैं बाहुबली विजयी
किन्तु नहीं उपालम्भ
युद्ध अभी शेष दो
जलयुद्ध हो प्रारम्भ।
(वाद्य-यन्त्रों की ध्वनि व आलोक-प्रपात द्वारा जलयुद्ध का दृश्य। नृत्य-मुद्राएँ। अन्त में बाहुबली द्वारा जल के पुष्ट आघाती छींटों से आहत हो, भरत द्वारा सरोवर में डुबकने, फिर भाग निकलकर बचने की मुद्रा में।)

(बाहुबली-पक्ष से दुगुना तुमुल जयघोष)

बाहुबली पक्ष : बाहुबली जल-सम्राट्
पौरुष बल अगाध
बाहुबली भुजबली
कामदेव साकार।

(भरत-पक्ष नीची दृष्टि किये हताश मुद्रा में)

सेनापति अयोध्या : मल्लयुद्ध अन्तिम अब एक
इसमें निहित विजय की टेक।
(वाद्य ध्वनि एवं नृत्य मुद्राओं द्वारा भरत-बाहुबलि मल्ल-युद्ध। अन्तिम स्थिति में बाहुबली भरत को दोनों बाहुओं पर थामे, और फिर कन्धे पर बिठा, धीरे से धरती पर खड़ा कर देते हैं। बाहुबली विजयी, बाहुबली विजयी, बाहुबली चक्रवर्ती, जय कामदेव, आदि के तुमुल नाद से वायुमण्डल गूँजता है। इधर हताश, किन्तु एकाएक उत्तेजित भरत क्रोध से विक्षिप्त हो दाँत किचकिचाकर, संघातिकचक्र बाहुबली की ओर फेंकते हैं, जो बाहुबली के मस्तक का चक्कर लगा, वापस भरत के हाथ में आ थमता है। संपूर्ण घटना आलोक-प्रपात एवं मुद्राओं के सम-नियोजन द्वारा प्रेषित)

नागरिक स्वर : हाय ! यह क्या किया
चक्र संघातिया भाई पर फेंक दिया !
भूले भरतेश निज क्रोध के आवेश
कि करता संहार नहीं चक्र आत्मीय का
द्रव्य यह अचेतन, भी रखता विवेक।
(भरत और बाहुबली दोनों घोर आत्म-ग्लानि से भर उठते हैं।)

बाहुबली : (भरत के पैरों पर गिरते हुए)
हिंसा की यह तीव्र लपट, अविवेक ज्वाल बन यों धधके ?
आत्म-ज्योति के पुंज भरत का क्रोध अनुज पर यों लपके ?
धिक्कार मुझे, परिताप मुझे
है आत्म-ग्लानि इस पौरुष पर।
मैंने किस धुन के वशीभूत हो
भाई को विक्षिप्त किया
कि प्राणघातिया चक्र चला
वह नीति-रीति से रिक्त हुआ।
(भरत, जो एक बार चेतना-शून्य से हो जाते हैं, सशक्त हो संभलकर बाहुबली को उठाकर गले से लगाते हैं)

भरत : (अपना सिर बाहुबली के वक्ष पर टिकाते हुए)
आ प्रिय अनुज,
टिका मेरा शीश,
निज बृहद् वक्ष पर
मूक तूने कर दिया
अभिमान का यह मूढ़ स्वर।
(महामन्त्रियों से)
मन्त्रीगण ! सेनापति वृन्द !
विजय-यात्रा सजाओ बाहुबली की
चक्रवर्ती है वही, मैं शरण वृषभदेव की।

बाहुबली : (बाहुबली अपने आभूषण, वस्त्र शनैः शनैः उतारते हुए)
चक्रवर्ती-पद तुम्हारा है भरत !
मैं प्रथम साधूँ,
निराकुल आत्म व्रत
बस इसी क्षण त्यागता हूँ बाह्य जग
हो दिगम्बर खोजता हूँ मुक्ति पग।
(बाहुबली दिगम्बरत्व धारण करने को उन्मुख। सबकी ओर से पीठ मोड़, पग उठा वन-पथ पर चलने को अग्रसर। भरत, सभासद व अन्य नागरिक भाव-विह्वल। ब्राह्मी, सुन्दरी, सुनन्दा, यशस्वती, महारानियों आदि का विह्वल हो भागते हुए प्रवेश)

ब्राह्मी : ठहरो भैया ! कहाँ चले हो, पकड़ पन्थ निर्जन
कठिन तपस्या कैसे साधोगे, अशान्त तन-मन ?

सुन्दरी : शान्ति ढूँढ़ने जाते हो, पर थोड़ा तो रुकते
भैया ! बहिन-भाई के नाते, हम कुछ कहते-सुनते।

यशस्वती : बेटा ! सारे पुत्र हुए हैं मुनिव्रत के धारी
सुलझायेगा कौन समस्या, पृथ्वी की सारी ?

सेनापति : कहाँ छोड़कर चले नाथ, इस धरती के संभार को
त्यागा जाता नहीं भूमि पर विचरण के व्यवहार को

भरत : रुको बाहुबलि,
करूँ प्रणाम !
स्वस्तिक विजय
तुम्हारे नाम !
बोलो सब बाहुबली जय
बोलो सब बाहुबली जय
बोलो सब बाहुबली जय ॥

(बाहुबली के पग आगे ही बढ़ते गये। उन्होंने पीछे मुड़कर नहीं देखा।)

(पटाक्षेप)

[मुनि बाहुबली प्रतिमायोग (खड्गासन) मुद्रा में ध्यानरत]

पार्श्व-गायन : चाँदनी चमक उठी कान्तिमय देह से
पुष्प पेड़ खिल उठे श्वास की सुगन्ध से
कामदेव प्राण-तत्व वायु में समा गया
आम्र मंजरित हुए, वसंत राग छा गया
पक्षियों के समूह, मुक्ति गीत गा उठे
जीव-जन्तु प्रेम भाव से विमुग्ध आ जुटे।

(प्रकृति के इन उपादानों का प्रभाव नृत्य या आलोक-छाया द्वारा)

पार्श्वस्वर नारी : देह का उत्सर्ग, कायोत्सर्ग
बीता एक वर्ष
चढ़ी वल्लरी—लताएँ देह पर
विश्राम करने।

(बाहुबली की छाया का कोण, मुद्रा वही रखते हुए, कुछ परिवर्तन)

दया से आर्द्र, कोमल गेह में
वे सो गईं निश्चित हो।
फूलती फलती रहीं, हो पल्लवित।
मिलता कहाँ ऐसा तरु गेह
कि जिसके रोम के प्रत्येक अणु
से झर रहा अमृत सरोरुह ?
लिपट तन से तरु-लताएँ खेलतीं हँसती रहीं
स्पर्श कोमल पा हरी हो, एक तन वे हो गईं।

(कोमल लताएँ बालक-बालिकाओं के नृत्याभिनय द्वारा प्रस्तुत की जा सकती हैं)

पार्श्वस्वर (पुरुष) : विषधर, मणि मस्तक पर धारे
बाहुबली पदयुग ढिग आये।
सोंध सुगंधित निर्भयकारी
धरती पा वे, वहीं समाये।

निडर अकम्प भीत-सी देह
महा भुजंग दंश क्यों मारे ?
सुखमय आश्रय, बाँबी रचकर
बैठे फण कुंडली सँवारे।

(सर्पों का आगमन, बाँबी बनाकर रहना। कुंडली, फन आदि—बालकों के नृत्याभिनय द्वारा प्रस्तुत किये जा सकते हैं।)

(जंगल के आदिवासी नर-नारियों का प्रवेश। उनमें लकड़हारे, पनिहारे, शिकारी, सांप पकड़ने वाले, कृषक आदि भिन्न-भिन्न वेशभूषा के व्यक्ति हैं।)

स्वर (नारी) 1 : कैसे यह देह प्राण
खड्गासन विराजमान
दो पग भर भूमि पर !

स्वर (पुरुष) 2 : न खाना, न पीना, न हिलना न डुलना
सोना न जगना, बीत गया वर्ष भर !

स्वर (नारी) 3 : देखो तनिक लताओं को, ये तन से कैसे लिपटी हैं
पैरों में लोटी जाती हैं या प्यार भाव से चिपटी हैं !

स्वर (पुरुष) 4 : सूखे मुखड़े पर भी तप
निडर भाव मुस्काता है।
और अचम्भा देखो तो यह
इनको भय नहिं आता है !

(वनवासी बालक-बालिकाओं का बाँसुरी बजाते गाते-नाचते प्रवेश)

वनवासी : कोयल की कूक सुनो
चातक की हूक सुनो
दूरियों से आ रही पुकार···

(सभी वनवासी बाहुबली के चारों ओर नाचने गाने लगते हैं। फिर उन्हीं में से कोई उनके चरण छूता है, कोई प्यार से उन पर हाथ टिका सहारा लगाकर बैठ जाता है। शेष सब विमुग्ध भाव से उन्हें निहारते-से वहीं बैठ जाते हैं। इसी बीच अयोध्या के नगर-नागरिकों का प्रवेश। वे बाहुबली को नमस्कार कर, उनकी स्तुति करते हैं)

नगर-नागरिक : पूज्य मुनि बाहुबली
दुर्द्धर तप मूर्तिमान
ज्योति जगी निर्जन में
दिप-दिप वन प्रान्तर में
बरसाओ ज्ञान-दान।

(शनैः शनैः मञ्च पर अँधेरा)

[बाहुबली-तपोभूमि से हटकर, वन-खण्ड का अन्य भाग आलोकित जहाँ आदिवासी व नागरिक वार्तालाप कर रहे हैं।]

एक नागरिक : व्याकुल हैं भरतराज, निरख भाई तापस को
राज-काज में लगा पा रहे न मानस को।

दूसरा नागरिक : गये थे वे आदिनाथ तीर्थंकर की धर्म-सभा
पूछने कि क्यों नहीं तपश्चरण फल रहा
इतना तप-ताप करते पूर्ण वर्ष है समाप्त
फिर भी क्यों केवलज्ञान
बाहुबली को नहिं प्राप्त ?
उत्तर था भगवान का—
'बाहुबली अन्तर में

भाव कण अटक रहा
ज्ञान-प्राप्ति राह में
कंटक-सा खटक रहा।'
'कैसे हो निराकरण'—पूछा था भरत ने
आ रहे हैं वे यहाँ
वही जतन करने।
(भरत का ब्राह्मी, सुन्दरी व अन्य सभासदों के साथ प्रवेश)

भरत : हाय! यह विडम्बना
बाहुबली मुनि हुए
पर मुझसे न विलग हुए।
उनके अंतरंग में, मैं कहीं
झीनी-सी मेघ-बूँद, सूर्य को ढके हुए!

ब्राह्मी : क्लेश रहित भरत-हृदय
दर्पण सम हो समक्ष
बाहुबली ज्ञान-सूर्य
प्रगटित अब हो प्रत्यक्ष।

भरत : आँसू की धारा
प्रक्षाले युगल चरण
पलकों से चुन लूँ
शंका का कण-कण।

(बाहुबली-तपोवन की ओर सब उन्मुख। मंच पर शनैः शनैः अँधेरा)

(बाहुबली-तपोवन पर आलोक। भरत व अन्य सब तपोवन में। बाहुबली ध्यानावस्था में। भरत समेत सब जन उनको प्रणाम करते हैं। ब्राह्मी और सुन्दरी बाहुबली से लिपटी बेलों को हटाने लगती हैं)

ब्राह्मी-सुन्दरी : भैया के कोमल शरीर से लिपटी है तू बेल
धन्य लता! जो वीतराग ने झेला तेरा मेल।

(अश्रु झरते हैं)

भरत : (नमित मुद्रा से उठते हुए)
बाहुबली आत्मलीन
खोल दे निज नेत्र साधक!

यह भरत उर स्फटिक निर्मल
दूर हो जो क्लान्ति बाधक।

ब्राह्मी : गज पर से उतरो भैया, बलि
(गूँज सी—'गजपर से' 'गज पर से' हाँ दर्प ही गज है)
गज पर से उतरो भैया, बलि !
चरणों में भरतेश
भरत-हृदय निर्मल जल-सागर
शंका-सीप न शेष।
(बाहुबली की मुख-मुद्रा पर कोमल स्मिति का भाव अधिक मुखर। हल्का-सा देह कम्पन)

भरत : भूमि एक टिकाव है,
स्थूल परमाणु रचित
अस्ति का स्वभाव है।
धरती का न कोई स्वामी
स्वामी भी भू-पर है आश्रित
धरती निज में अपनी सत्ता
सत्ता निज से अनुशासित।
(बाहुबली नेत्र खोलते हैं। वाद्य-ध्वनि व आलोक-प्रपात द्वारा केवलज्ञान प्राप्ति की सूचना)

पार्श्व-स्वर : (मंच पर से सामूहिक-स्वर के साथ)
जय जय जय श्री बाहुबली का अटल अडिग निज ध्यान
आत्म उन्मुखी तपन शक्ति से उपजा केवलज्ञान।
संभ्रम संशय दूर हुआ
उदय ज्ञान का सूर्य हुआ।
(प्रारम्भिक बाहुबली-विनती के स्वर 'जय बाहुबली, जय गण नायक—' वायुमण्डल में गूँजते हैं।)

(पटाक्षेप)

दूसरा खण्ड

(युवक-युवती युगल का प्रवेश)

युवक : यवनिका उठती है अतीत के क्षितिज पर
आदि युग से उतर आओ ऐतिहासिक युग में।

युवती : अन्तराल के विशाल वक्ष को प्रदीप्त करती
कैसी यह आभा झलकती
है यह क्या ?
(परदे पर तक्षशिला नगर का आभास छाया में या स्लाइड द्वारा)

युवक : तक्षशिला
पोदनपुर बाहुबली का !
(मूर्ति की छाया)

युवती : और इसमें यह मूर्ति महा ?

युवक : बनवाई चक्रवर्ती भरत ने मूर्ति चमत्कारी
प्रथम मोक्षगामी, भाई बाहुबली स्मृति में।
(घण्टों की मंगल-सूचक ध्वनि)

युवती : नमस्कार मुद्रा में दिखता है कोई, मूर्ति के चरणों में
(मूर्ति के चरणों में प्रणमित महाराज चन्द्रगुप्त की छाया।)

युवक : स्वयं विश्व में प्रसिद्ध चन्द्रगुप्त सम्राट्

युवती : बाहुबली, तक्षशिला, चन्द्रगुप्त सम्राट्
एक ही सूत्र में तीनों विराट् ?

युवक : बाहुबली शौर्य-सामर्थ्य के महान चिह्न
संस्थापक प्रथम, प्रजातन्त्र के स्वतन्त्र
बलशाली शासक अनुकरणीय
विजेता भरत चक्रवर्ती के

पराक्रमी भुजबली ।

किन्तु प्रभुत्व त्याग धरती का
हुए प्रथम मोक्षगामी
तीर्थंकर पिता ऋषभ से भी पूर्व
अपनी आत्म-शक्ति से ।

और यह चन्द्रगुप्त !
भारत सम्राट् पहला
पहुँचा है तक्षशिला
भारत स्वाधीनता का रक्षक महान्
यूनानी योद्धाओं से करने को युद्ध
मैत्री-विचार विनिमय प्रबुद्ध
प्रेरणा ले रहा आत्म-शक्ति शौर्य की ।
दोनों समन्वित
इस पन्ने की प्रतिभा में ।

(शनैः शनैः छाया लुप्त । अन्धकार । युवक-युवती का प्रस्थान ।)

(मंच आलोकित—महाराज चन्द्रगुप्त विचार-मुद्रा में ।)

चन्द्रगुप्त : (स्वगत)
कैसे थे बाहुबली परम प्रतापी शूरवीर
जिनके भुजबल ने पराजित किये सहस्रों नरेश
चक्रवर्ती भरत को भी ।
वही शौर्य मेरे प्रणाम का अधिकारी ।
सोचता हूँ, विजय के उस महान चमत्कारी क्षण में
त्याग दी विजय की सारी उपलब्धि ।
चल दिये वन को और साधी तपस्या
कि मार्ग हो प्रशस्त
उस अन्तिम विजय का,
जो तोड़ती है अन्ध गढ़
क्रोध, मान, माया के
लोभ और मोह के ।
मानस की धरा में

धर्म का एक बीज
पड़ गया अजाने ही।

(मंच पर क्रमशः अँधेरा। पुनः शनैः शनैः आलोक। युवक-युवती का प्रवेश)

युवती : मौन···मौन···मौन···
कैसा यह महा मौन ?
बोलो, हे बन्धु ! तुम ही इतिहासकार
भंग करो मौन और खोजो वह आधार
उत्तर जो देता हो हमारे इस प्रश्न का
अन्तिम दिनों में था कहाँ सम्राट्
एकछत्र राज्य का जो स्वामी था, महा-विराट्।

युवक : प्रश्न न जितना कठिन
सरल उतना समाधान
चलते हैं उज्जयिनी नगरी भाग्यशालिनी !

(मंच पर अँधेरा)

(उज्जयिनी नगरी में महाराज चन्द्रगुप्त का अन्तरंग कक्ष। महारानी चन्द्रश्री और चन्द्रगुप्त)

महारानी : खोये से, भूले से, रहते क्यों महाराज !
जीवन है परिपूर्ण, विस्तृत है साम्राज्य
खड़ा किया पूरा-का-पूरा समर्थ राष्ट्र
बिखरी इकाइयों को जीता है, जोड़ा है
गरिमा के दिगन्त में गौरव-गज छोड़ा है।

चन्द्रगुप्त : है तो, किन्तु जीवन का यही क्या सब कुछ ?
अन्तिम उपलब्धि, देवि ! यह है क्या सचमुच ?
है कुछ आगे भी, मार्ग क्यों बुलाता है ?
परम अर्थ पाने को मन यह अकुलाता है।

(परिचारिका का प्रवेश)

प्रहरी : महाराज !
राज्य के वनों का, मुख्य पालक, वन-पाल
आज्ञा का अभिलाषी, आना चाहता तत्काल।

चन्द्रगुप्त : आने दो।

(परिचारिका चली जाती है)

(रानी से)
देखो, महारानी यह कैसी है विचित्र बात
कहता है मन कुछ नया ही सूत्रपात !

(वनपाल को लेकर प्रहरी का प्रवेश)

वनपाल : सविनय प्रणाम, हे विश्वपालक महाराज
वन में पधारे, एक महिमामय मुनिराज।
कैसे मैं बताऊँ जो घटा चमत्कार
कोटपाल ने उनका जब किया तिरस्कार।

चन्द्रगुप्त : तिरस्कार, साधु का !

महारानी : क्या उसको अधिकार इतना ?

वनपाल : खड़े थे ध्यान-मुद्रा में साधु शान्त निश्चल
समझे कोटपाल यह है कपटी कोई गुप्तचर।
रज्जु से बाँधा तो,
बिजली-सी चमकी
टूट कर बिखर गई
कहाँ सक्षम थी ?
और फिर—क्या कहूँ महाराज !
कोटपाल के ही गले में वह आ पड़ी।

चमकी फिर बिजली।
हाथ उठा साधु का, अभयदान मुद्रा में
मुक्त कोट-पाल, बन्धन खुले सभी।

वन है, मुनिराज और संघ का तपस्या-धाम
आचार्य श्रुतकेवली हैं, भद्रबाहु स्वामी नाम।

चन्द्रगुप्त : शुभ है, यह आगमन
जाओ वन-पाल
दर्शन को पहुँचेंगे हम,
प्रथम प्रातःकाल।

(कोटपाल का और प्रहरी का प्रस्थान)
(मंच पर शनैः-शनैः अँधेरा)

(दृश्य तपोवन का। भद्रबाहु साधुसंघ के साथ विराजमान हैं। चरणों के पास चन्द्रगुप्त और चन्द्रश्री बैठे हैं। छाया दृश्य)

चन्द्रगुप्त : स्वामिन्, धर्मगुरु, कृपालु, स्वीकृत हो नमस्कार।
धन्य भाग्य उज्जयिनी के, हर्ष का न पारावार।
वनपाल ने बताया, सारा समाचार
आपकी तपस्या का देखा चमत्कार।

भद्रबाहु : राजन् चन्द्रगुप्त !
नहीं वांछित है चमत्कार
अन्तर्मन दूर कर देता, जब सब विकार
शुद्ध दृष्टि रचती तब अपना ही संस्कार।

चन्द्रगुप्त : देखे विचित्र स्वप्न, आकुल हूँ निरुपाय
आपकी ही करुणा की, अब है सहाय
भगवन् ! बताइये क्या अर्थ, क्या उद्दिष्ट
सपनों में छिपा जो अविदित भविष्य ?

(शनैः शनैः मंच पर अँधेरा)

(मंच पर प्रकाश घोषक-दल का प्रवेश)

घोषकदल का नेता : भद्रबाहु स्वामी ने स्वप्न-फल बताये हैं
उनका ही विवरण हम देने यहाँ आये हैं।

(सोलह स्वप्नों का विवरण घोषक-दल द्वारा प्रस्तुत इस प्रकार से कि 'एकतारा' वाद्य-ध्वनि के साथ एक दल का स्वर चन्द्रगुप्त का और दूसरा भद्रबाहु का प्रतिनिधित्व करता है)

(स्वप्न) 1 : डूबता दिखायी दिया सूर्य-बिम्ब प्रभाहीन।
(समाधान) 2 : पंचम है काल यहाँ होगा श्रुत ज्ञान क्षीण॥

(1) : देखी कल्पवृक्ष की शाखाएँ टूटतीं।
(2) : शासन के हाथों से संयम-डोर छूटती॥

(1) : देखा चन्द्रमण्डल में हो गये अनेक छेद।
(2) : वादी-प्रतिवादियों से होगा धर्म में विभेद॥

(1) : सर्प था भयंकर, फण बारह थे विकराल।
(2) : भोगेगी धरा बारह वर्ष का दुष्काल ॥

(1) : लौट गया स्वर्ग का विमान दिशा दुष्कर।
(2) : चारण मुनि, विद्याधर, आयेंगे न भू पर ॥

(1) : कमल है प्रफुल्ल, किन्तु खिला हुआ घूरे पर।
(2) : कलावान धारेंगे अधर्म को ही गुरुतर ॥

(1) : भूतों का एक दल नृत्य-मगन आया।
(2) : जन-मन को घेरेगी अनिष्ट प्रेत-छाया ॥

(1) : चमक उठे जुगनू अन्धकार हुआ प्रेरक।
(2) : अल्प ज्ञान वाले बन जायेंगे उपदेशक ॥

(1) : सूखे सब सरोवर किन्तु जल भी था कहीं-कहीं।
(2) : धर्म शेष दक्षिण में किन्तु और कहीं नहीं ॥

(1) : सोने की थाली में कुत्ता खीर खा रहा।
(2) : नीच वृत्ति वालों में ऐश्वर्यपद छा रहा ॥

(1) : हाथी था विशाल, उस पर बकरे का आसन।
(2) : चंचल-मति शासकों से सजेगा सिंहासन ॥

(1) : सीमा उलंघ गया लहराता सागर।
(2) : न्यायहीन शासन सब लेगा धन-धान्य हर ॥

(1) : रथ भार खींचते थे बछड़े दो कोमल।
(2) : वृद्ध होंगे पंगु, केवल युवकों में आत्म बल ॥

(1) : राजपुत्र करता था ऊँट की सवारी।
(2) : हिंसक बनेगी व्यवस्था, मतिमारी ॥

(1) : ढकी दिखी रत्नों की राशि जो धूल से।
(2) : धर्म होगा आवृत साधुओं की भूल से॥

(1) : हाथियों का काला झुण्ड आपस में लड़ता।
(2) : होते तब विनष्ट मेघ, सूखा तप पड़ता॥

(शनैः शनैः अँधेरा। घोषक-दल लुप्त)

(मंच पर चन्द्रगुप्त, महारानी चन्द्रश्री। छाया में भद्रबाहु)

चन्द्रगुप्त : धन्य हुआ स्वामी, भविष्य-पट खोल दिये
जीवन दिशा के संवेत स्वर बोल दिये।

भद्रबाहु : राजन्, जब प्राणी स्वर अपने ही सुनता है
सत्य को तभी वह निज अन्तर में गुनता है।

चन्द्रगुप्त : वे ही स्वर गूँज रहे, आज प्राण मन में
काल-लब्धि आती है, इसी भाँति क्षण में।
भद्रबाहु स्वामिन्, आचार्य श्रुतिकेवलिन्!
संकट को भविष्य के निमित्त से जाना है
मैंने भी स्वप्नों का रहस्य पहचाना है।
निर्भय हूँ, पुत्र बिन्दुसार सब सम्भालेगा
राजगुरु चाणक्य का अनुशासन पालेगा।
मेरा संकल्प है कि लूँगा मुनि दीक्षा
साधना की योग्यता की दूँगा परीक्षा।

भद्रबाहु : जानता हूँ, जीवन-भर युद्धों का नेता
एकछत्र साम्राज्य संस्थापक, विजेता
होकर उद्विग्न, शान्ति चाहता है अविकल
स्वस्ति, शुभास्तु, धर्मवृद्धि हो पल-पल।

चन्द्रगुप्त : बनूँगा निर्ग्रन्थ, और त्यागता हूँ परिग्रह
संयम की साधना में सहूँगा परिषह।

(स्वरों के साथ साथ महारानी की प्रतिक्रिया अभिनय)

पार्श्वस्वर : ठगी हुई देखती-सी रह गई महारानी
बोली कुछ नहीं, सोखा आँखों का पानी।

भद्रबाहु : उत्तर से दक्षिण की यात्रा का क्षण है
संघ के जीवन की सुरक्षा का प्रण है।

वीर वर्धमान के अहिंसा सत्य सिद्धान्त
साधुओं का संयम और चर्चा रहे निर्भ्रान्त।

(शनैः शनैः अँधेरा)

[घोषक-दल का प्रवेश जो नगर के समाचार प्रेषित करता है]

घोषक-दल : संघ की यात्रा का समाचार फैला जब
जुट गया श्रावक-श्राविकाओं का संघ तब।
कितने थे श्रेष्ठि जिनकी सम्पदा थी अपार
व्याकुल हो भद्रबाहु स्वामी के पास आये
ठहरने की विनती की
हर्ष आँसू उमड़ आये।

(शनैः शनैः अँधेरा)

(मंच पर प्रकाश। अन्य श्रेष्ठियों के साथ श्रेष्ठि प्रमुख का प्रवेश। छाया में भद्रबाहु)

श्रेष्ठि-प्रमुख : होगा न कष्ट मुनि संघ को कदापि वहाँ
अक्षय भण्डार धनधान्य से हैं भरे जहाँ।

भद्रबाहु : भव्य जनो!
भक्ति और श्रद्धा है तुम्हारी विशुद्ध
साधन भी पूरे हैं।
किन्तु दुर्भिक्ष का लम्बा है काल
दृष्टि देखती है दूर
केवल उसे ही नहीं, जो है तत्काल।
संयम की साधना का क्षेत्र है दक्षिण
धर्म रहे अविचल, यह संघ का अटल प्रण।

(शनैः शनैः अँधेरा। छाया में भद्रबाहु मुनि, उनका संघ व बहुत से श्रावक-श्राविकाएँ दक्षिण को प्रस्थान करते हुए)

पार्श्वस्वर : चल पड़ा संघ सभी साधुओं का निर्विकार
पग-पग की यात्रा थी संयम का चमत्कार।

(मंच पर महाराज चन्द्रगुप्त साधारण श्रावक की वेशभूषा में। महारानी उनको प्रणाम करती हैं। पश्चात् चन्द्रगुप्त

संघ के साथ, छाया में। वाद्य-ध्वनि द्वारा संघ की यात्रा का आभास)

पार्श्व स्वर : भद्रबाहु स्वामी के चन्द्रगुप्त अनुचर,
चले साथ, संयम की साधना में तत्पर।
व्याकुल हुआ अन्तर, शब्द सूने, भाव निराधार
चन्द्रश्री ने गुरु को और पति को किया नमस्कार।

(संघ के प्रस्थान के स्वर धीमे होते जाते हैं। छाया लुप्त हो जाती है।)

(मंच पर आलोक। केवल महारानी चन्द्रश्री)

महारानी : देखती रही, सुनती रही, जो कुछ यहाँ घट रहा।
समझ नहीं पाती, मन व्याकुल हो भटक रहा।
गुरुवर की दूरदर्शी, वाणी कल्याणी।
प्रियवर की विदा-बेला, रोकूँ नयन पानी।

(शनैः शनैः अँधेरा)

(पार्श्व से घोषक-दल के स्वर उभरते हैं)

घोषक-दल : श्रवण बेलगोल तीर्थ, पावन सनातन,
भद्रबाहु स्वामी ने जमाया वहीं आसन।
कटवप्र के ऊँचे शिखर पर जब पहुँचे।
त्रिकालदर्शी आचार्य भद्रबाहु
जान गये निमित्त ज्ञान से वह
कि अल्प रह गई है आयु शेष
समय है निकट कर्मों की निर्जरा का
समाधि में तल्लीनता का।
कर दिया विदा समस्त मुनि-मण्डली को
कि बढ़े वह आगे
नये आचार्य विशाखाचार्य की अनुज्ञा में।
साथ रहा केवल एक ही शिष्य
दीक्षा नाम प्रभाचन्द्र
इतिहास नाम चन्द्रगुप्त
गुरु की सेवा का था पुण्य अवसर महान
समाधि-लीन गुरु का वहाँ ही हुआ निर्वाण।
प्रभाचन्द्र, चन्द्रगुप्त हुए ध्यान मग्न स्वयं

विस्तीर्ण शिलाओं के शीतल पटल पर
द्वादश वर्षों की तपस्या साध
वहाँ ही सल्लेखना धारण की
मौन इतिहास मुखर हो उठा
चन्द्रगिरि पर, चन्द्रगुप्त बसदि में।

प्रभाचन्द्र, चन्द्रगुप्त होते जब ध्यान लीन
नयनों में झलक जाती प्रतिभा बाहुबली की
दर्शनों का पुण्य जिसका पाया तक्षशिला में
तक्षशिला दूर उत्तर में अवस्थित
विन्ध्यगिरि शिखर यहाँ सामने था प्रस्तुत
पोदनपुर विन्ध्यगिरि, ध्यान में थे एकाकार
नयनों में वही मूर्ति झलक जाती बार-बार।
मूर्ति के मस्तक का रूप विन्ध्यगिरि शिखर
पूरी छवि बिखर जाती नयनों में सुखकर
धन्य धरा श्रवणबेलगोला की ललाम
निवेदित ऋषि-भूमि को शत-शत प्रणाम।

तृतीय खण्ड

[लोक कथा-शैली में गाते हुए समवेत-गायक समूह का प्रवेश]

सन् नौ सौ अस्सी की गाथा, दस सौ वर्ष पुरानी।
जनमे कर्णाटक भूपर चामुण्डराय सेनानी॥
गंग वंश के वीर शिरोमणि जैनधर्म अनुरागी।
मात कालला देवी, 'अजिता' पत्नी थी बड़भागी॥
नेमिचन्द्र अरु अजितसेन गुरु जीवन-पथ निर्माता।
लोक-आचरण, आत्म उन्नयन, योगशास्त्र के ज्ञाता॥
भरत—बाहुबली, आदिनाथ के पुत्रों की यश-गाथा।
गुरु से सुनकर भक्ति तरंगित हुई कालला माता॥
बाहुबली की प्रतिमा तिष्ठित पोदनपुर उत्तर में।
भरत चक्रवर्ती ने की थी पावन प्रिय स्मृति में॥
प्रतिमा के दर्शन की महिमा भक्ति-भावना संगम।
कामदेव सौन्दर्य राग में वीतरागता अनुपम॥
उस प्रतिमा-दर्शन का प्रण, माता के मन का जान।
पोदनपुर की यात्रा, ली चामुण्डराय ने ठान॥
यात्रा-पथ में ग्राम, दोडबेट्टा की पावन घाटी।
चिक्कबेट्ट के मध्य जहाँ विश्राम-धाम परिपाटी॥
वहीं रुका चामुण्डराय दल श्रमण-तीर्थ 'कल्याणी'।
बेलगोल के स्वच्छ सरोवर तट की प्रकृति सुहानी॥

[अन्तिम पंक्ति स्वर के साथ ही चामुण्डराय, उनकी माता, पत्नी और आचार्य तथा अन्य साथी, सैनिक और कर्मचारियों के दल का प्रवेश। यात्रा-पथ पर अग्रसर और अन्त में श्रवण बेलगोल-स्थली पर विश्राम]

(पुरुष-नारी युगल-गायन और नृत्य)
चन्द्र छटा मधुर रात्रि
यात्री थे निद्रारत
देवी कूष्मण्डिनी
तब उतर आई पलकों पर
बोली यों स्वप्न में,
माता से,
गुरुवर आचार्य से,
(पुरुष-नारी युगल का प्रस्थान)

[स्वप्निल रात्रि का आभास, सोते हुए यात्री गण।
कूष्माण्डिनी देवी का प्रवेश]

कूष्माण्डिनी : परम भक्त यात्रीजन !
भव्य आत्म
बाहुबली प्रतिमा,
आदि युगीन
दुर्गम पथ
मूर्ति हुई आच्छादित
कुक्कुट सर्प अंग-अंग
दर्शन है दुर्लभ
यात्रा नहीं सार्थक।
(देवी स्थिर मुद्रा में)

पार्श्वस्वर : क्या हो तब ?
स्वप्न में ही
तीनों का
गुंजा ज्यों प्रश्न साथ
देवी का हस्त उठा
वरदानी मुद्रा में।

कूष्माण्डिनी : 'वत्स, बनो आश्वस्त
तक्षशिला पोदनपुर
होगा साकार यहाँ
विन्ध्यिगरि घाटी पर
वही प्रभु बाहुबली
वही विश्वमोहन छवि

(चामुण्डराय के निकट जाकर)

ओ भक्त-शिखर चामुण्डराय
हों आदिनाथ प्रभु अब सहाय
प्रात: शुचि सात्विक भाव धार
जैसे ही हो ऊषा-प्रसार
साधो स्वर्णिम शर लक्ष्य-बाँध
चोटी पर छूटे वह अबाध।
प्रभु-छवि का दर्शन चित में धर
प्रकटेगी प्रतिमा इस थल पर
दर्शन कर कृतार्थ होगा जन-जन

(देवी अदृश्य हो जाती है)

[प्रभात में ऊषा-किरण प्रसार सूर्योदय। चामुण्डराय, परिवार और आचार्य। प्राणों में आह्लाद]

चामुण्डराय : कैसा आनन्द ज्वार
खुला भक्त, हृदय-द्वार
देवी कूष्माण्डिनी
भाग्य दिव्य-दायिनी
फूँक गयी प्राण-तत्त्व
जीवन का मुक्त सार
उमड़ा आनन्द-ज्वार।

माता : मैं जागृत हूँ या स्वप्न-रमी ?
नयनों में देवी मूर्ति थमी
बोली : सुपुत्र का धनुर्जतन
इस थल रच देगा मूर्ति-रतन।

आचार्य : दर्शन में आ, माँ देवी ने
मुखरित कीनी जो दिव्य-ध्वनि
वह, आत्मज्ञान
है, प्रखर प्राण
वह, स्वप्न सेतु
है, पुण्य हेतु।

(चामुण्डराय से)

हे शिष्य-प्रवर गोम्मट !

भक्ति सहित
भाव निहित
देवी का स्वप्न विहित
वाणी साकार करो
शैल-शिखर लक्ष्य साध,
स्वर्णिम-शर पार करो।

चामुण्डराय : फड़क रहा बाहुबल
एक लक्ष्य, एक पल
अर्पित अस्तित्व-तरी
बाहुबली तीर लगी
ज्वार का न ओर-छोर,
रोम-रोम है विभोर
भँवर-लुप्त वेग धार,
उमड़ा आनन्द-ज्वार।

(वाद्यध्वनि, आलोक-संयोजन, छाया अथवा कट-आउट द्वारा दृश्य-नियोजन इस प्रकार कि चामुण्ड-राय, गुरु आचार्य व कुछ साथी चन्द्रगिरि पर्वत पर खड़े हैं। चामुण्डराय स्वर्ण-तीर साधकर सामने विन्ध्यगिरि पर फेंकते हैं। वहाँ शिखर पर बाहुबली-मूर्ति का मस्तक-भर झलकता है।)

सामूहिक स्वर : चमत्कार ! चमत्कार !
विस्मय अपार विस्मय अपार !

चामुण्डराय : प्रभु नमस्कार, प्रभु नमस्कार
पाया जीवन का आज सार
साकार शान्ति छवि को निहार

पुरुष-नारी युगल का प्रवेश। उनके साथ सभी नागरिक मिलकर उत्सव-नृत्य करते हैं।)

सामूहिक स्वर : बोलो जय-जयकार
बोलो जय-जयकार
बही भक्ति-धार
करुणा अपार
शुचि आत्म-सार
प्रभु-छवि निहार,

बोलो जय-जयकार
बोलो जय-जयकार !

चामुण्डराय : हम जन-जन का सौभाग्य अमित
जो प्रभु-मुख के दर्शन पाये
अब इस अपूर्व अतिशय अनंग
आनन की दीपित कोमलता,
कौन दक्ष शिल्पी आँकेगा
प्रतिमा के नख-शिख अंग-अंग से
झरती है जो सोमप्रभा !

खोज-खोज हार चुके
शिल्पी तो हैं अनेक
टेक किन्तु यही एक
अद्‌भुत जो मूर्त हुआ
उसको साकार करे !
भव्यता हो मुखरित
रोम-रोम
कोर-कोर
पोर-पोर
कहाँ प्राप्य शिल्पी
उकेरे यह भाव-ओज
हारे हैं खोज-खोज

(समूह में से एक, प्रमुख नागरिक कलाकार अरिष्टनेमि को इंगित करते हुए आगे बढ़ आता है)

नागरिक : लाये हम आज जिन्हें,
यह हैं अरिष्टनेमि
शिल्पनिष्ठ, धर्म-प्रेमी
छैनी की तरलता
विद्युत-सी प्राण-प्रदा
स्वसन के स्पन्दन की
मूर्तिमती गतिमत्ता ।
आओ हे कलाकार,
भावों के शिल्पकार,
स्पन्दन है, तुम ही हो

सर्जक वह मूर्तिकार
सिरजे, जो कल्पना में
निहित हुआ चमत्कार।

अरिष्टनेमि : हूँ शत कृतज्ञ मैं
भूरि-भूरि धन्य मैं
किन्तु क्षमा करें आर्य
यह असाध्य, कठिन कार्य
अर्थ शक्ति, आत्मभक्ति
दीन का क्या प्राप्य भाग ?

चामुण्डराय : होते क्यों निराश व्यर्थ
करें बाहुबली समर्थ।

अरिष्टनेमी : अप्रतिम को सुप्रतिम
करते धनवान महिम

चामुण्डराय : समझा संकेत,
किन्तु बोलो तो
कलावन्त
होगा क्या मूल्य देय ?

अरिष्टनेमि : मूल्य तो अमूल्य है
मुखर होना भूल है।

चामुण्डराय : निडर हो, बोल दो।
भेद-ग्रन्थि खोल दो।

अरिष्टनेमि : अपनी भक्ति श्रद्धा को
आप स्वयं आँककर
दीजे अनुकूल मूल्य।
जितने पाषाण-खण्ड
छैनी से झरें कण
उतनों को तौल-तौल
सोने में भरें मोल।

चामुण्डराय : गद्‌गद हूँ, रूपकार
सुनकर निश्छल निर्भीक बात
होता हूँ वचन-बद्ध
धन से होकर विरक्त
दूँगा जो हुआ व्यक्त

पाहन कण झरें जो
स्वर्ण-धूलि बनें वो।

नागरिक स्वर : धन्य-भाग हैं उदार,
हैं कृतार्थ आज हम
निर्मित हो महामूर्ति
सत्यं शिवं सुन्दरम्।

(बाह्य-ध्वनि एवं आलोक सम्पात द्वारा मूर्ति रचने का आभास। बीच-बीच में अर्ध-निर्मित मूर्ति की झलक। पुरुष नारी युगल का समवेत नृत्य-गायन)

नारीस्वर : सुनो !
यह मीठी ध्वनि ठन-ठन-ठन
गिरि पर यह छैनी की खन-खन
शिला खण्ड खिल-खिलकर आये
बिखर बिखर मानो मुस्काये
झरते कण हैं मगन-मगन
नाच रहे हैं छनन-छनन।

(गाड़ी के पहियों की आवाज)

पुरुषस्वर : देखो तो इधर भाई
कंचन छवि झमाझम
गाड़ी भरी गिरि सम,
भागी चली जा रही कलाकार-ग्राम
रखेगा कहाँ भला, छोटा-सा धाम ?

और, उधर देखो यह मर्म दृश्य—
माता है व्याकुल शिल्पी के घर में
पुत्र उसका खो गया माया-डर में

(सोने भरी गाड़ियों को रोकते हुए अरिष्टनेमि की माँ। छायांकन। माँ का प्रवेश)

वृद्धा माँ : हाँ, पुत्र मेरा खो गया इस माया-डगर में
शरण मेरी बाहुबली तेरे ही चरण में

(प्रस्थान)

(अकस्मात् किसी दुर्घटना हो जाने का वाद्य-यन्त्रों द्वारा प्रभाव। मंच पर जड़ित मुद्रा में अरिष्टनेमि हताश, निराश, अर्ध-निर्मित मूर्ति के समक्ष)

अरिष्टनेमि : हाय हाय।
निर-उपाय
पाप-उदय
आत्म-भय
जड़ित हाथ
झुका माथ
स्पन्द-रहित
प्राण गात
निश्चल तन
विह्वल मन।

(मेघ गर्जन, मेघ-घटा। अनिष्ट की सूचना। ग्रामीण नर-नारियों का प्रवेश। समवेत गान-नृत्य)

नर-नारी : कैसे यह बादल छाये
घोर-घोर-घोर
साँसों की धड़कन में
शोर-शोर-शोर।

(अरिष्टनेमि की माँ का प्रवेश)

वृद्धा माँ : पुत्र मेरा खो गया माया-डगर में
ढूँढ़ती पहुँची यहाँ मैं,
बाहुबली की शरण में।

नर-नारी : क्या पता ? ओर-छोर
अन्धकार सभी ओर,
छाया है गहन घोर
गहन घोर, गहन घोर···

अन्य स्वर : कलाकार पुत्र जननि
तुम महा दुःखिनी,
सम्बोधो पुत्र को
आत्म के जागरण का
हो उदय भोर
भोर ! भोर ! भोर···

(अरिष्टनेमि की माता बाहुबली की अर्धनिर्मित प्रतिमा के सम्मुख, अपने पुत्र को देखकर)

वृद्धा माँ : पुत्र मेरा खो गया माया-डगर में
स्वर्ण ने डाली तरणि उसकी भंवर में
बाहुबली प्रभु दो उसे अमित दया-दान
आत्महत लोभरत यह, मैटो अज्ञान।

(ग्रामीणों के स्वर कोरस में)

नर-नारी : माया का अन्धकार छाया हैं घोर
आतम के जागरण का हो उदित भोर
भोर, उदित भोर
भोर, उदित भोर।

(धीरे-धीरे अरिष्टनेमि के अंगों में प्राण संचार। निर्मुक्त हो वह माँ के पैरों में गिर पड़ता है)

अरिष्टनेमि : किस निद्रा में मैं सोया था
माया के भ्रम में खोया था
माँ, तू ऊषा-सी प्रकटी जब
आत्म-चेतना उदित हुई तब
निज में स्थित मेरा निजत्व
मैं, छेनी, पाहन, एक तत्व।

माँ : आह्वान, शारदा देवी का
हो त्राण बाहुबली-सेवी का।

(सभी नमित मुद्रा में हो जाते हैं। मूर्ति-निर्माण की ध्वनियों और मन्दिर की घण्टियों का मिश्रित स्वर गूँजने लगता है।)

(पटाक्षेप)

[नृत्य-गान मग्न कर्नाटक की प्राचीन वेशभूषा में ग्रामवासियों का समूह प्रवेश करता है। लोकनृत्य]

विन्ध्य गिरि झूम रहा
नील गगन चूम रहा
प्राणों में अमित ज्वार
हुलसित हिय, मुक्त द्वार

शोभा प्रभु-छवि निहार
भूले गृह काज-भार
मुक्त द्वार। छवि निहार।
अमृत का अमित ज्वार।

(नृत्य होता रहता है)

(इसी बीच, मंच के एक ओर से सेनापति चामुण्ड-राय, उनकी पत्नी और माँ, मूर्तिकार अरिष्टनेमि, उसकी माँ, तथा अन्य कई राज-पुरुष युगलों का प्रवेश। सभी पूजा के वस्त्र धारण किये हैं। उनके साथ अंग-रक्षक के रूप में कुछ सैनिक भी आये हैं। नृत्य समाप्ति पर होता है। राजपुरुषों के प्रवेश पर नृत्य-दल इन्हें चारों ओर से घेर लेता है और जय-जयकार करता है)

उल्लसित स्वर : जय जय श्रीमन् चामुण्डराय।
जय शिल्पी सुबुध अरिष्टनेमि।
जय मातुश्री चामुण्डराय
जय शिल्पी-मात अरिष्टनेमि
जय अमितवीर्य बाहुबली !
जय ऋषभदेव आदिनाथ।
जय भगवान् बाहुबली

(बार-बार)

एक नागरिक : (चामुण्डराय को लक्ष्य करते हुए)
हैं सैन्य-शूर चामुण्डराय
भू-हित शर-साधन में प्रवीण
जिन-भक्ति शक्ति का ओज शौर्य
स्वर्णिम तीरों में ढल नवीन
कर दिया बाहुबली-मूर्ति लीन

दूसरा : विस्मित विशाल वन-पीठ ब्रह्म
हे अमर कीर्ति के शिखर-स्तम्भ

समवेत स्वर : जय जय ध्वनि गूँजे युगों पार
जय बाहुबली गोमट उदार

(बार-बार)

चामुण्डराय : मेरा धन केवल भक्तिभाव
जननी अभिलाषा मूर्ति-चाव

उत्तर की पोदनपुर महिमा
दक्षिण की आज बनी गरिमा
उत्तर-दक्षिण का सेतु नवल
'कल्याणी' सर में भक्ति-कमल
मैं नमित प्रजा को, परिकर को
जो मान दे रहे अनुचर को।

आचार्य : सेनापति सर्व-प्रथम विशेष
वे नायक जिन-प्रतिमाभिषेक
थामे कर में शुचि स्वर्ण कलश
प्रक्षालें अब प्रभु का मस्तक।

(हाथों में कलश थामे, चामुण्डराय के पीछे-पीछे पंक्ति बद्ध कई पुजारी-पुजारिन मूर्ति की ओर बढ़, न्हवन-जल ढालने की मुद्रा में।)

पार्श्व स्वर : क्षीरार्णवस्य पयसां शुचिभिः प्रवाहैः
प्रक्षालितं सुरवरैर्यदनेकवारम्।
अत्युद्धमुद्यतमहं जिनपादपीठं
प्रक्षालयामि भव-सम्भव-तापहारि॥

(साकार स्वप्न' और 'भक्तिभावना' नामक भक्त पुरुष-नारी युगल-पात्रों का प्रवेश। नृत्य-गायन।)

आश्चर्य महा! क्या विघ्न घटा!
स्वर्णिम कलशों का क्षीर कहीं
छू पाता प्रभु के चरण नहीं
केसर चन्दन चर्चित पराग
अनगिन घट से निर्गत सुवास
प्रक्षालित करती लगातार
फिर भी रुक जाती क्षीरधार!
आश्चर्य महा! क्या बिघ्न घटा!

(प्रस्थान)

(एक बृद्धा 'गुल्लिका अज्जी' का प्रवेश। हाथ में सूखे फल की कटोरी है, जिसमें थोड़ा-सा दूध है। भक्तिभाव विह्वल हो प्रतिमा की ओर बढ़ाकर, उपस्थित व्यक्तियों को सम्बोधन करते हुए)

वृद्धा : मैं प्रक्षालन हित आयी हूँ
दो बूंद क्षीर भर लायी हूँ
मस्तक पर प्रभु के ढारूँगी
अपना सौभाग्य उजारूँगी
पहुँचा दो मुझको उनके ढिग।

(आगे बढ़ती है। एक रक्षक रोकते हुए)

एक रक्षक : ओ बुढ़िया माँ,
गुल्लिक फल में इतना-सा जल
श्रद्धा का यह साहस निष्फल।

वृद्धा : मेरी श्रद्धा नाप न भोले।
तन मेरा जितना ही जर्जर
अन्तर में श्रद्धा का मर्मर
गुल्लिक फल की यही कटोरी
काटेगी मेरी भव-डोरी।
दो बूंदों में शत-शत गागर
चरणों में उमड़ा मन सागर
मुक्ति मार्ग मेरा चित डोले
मेरी श्रद्धा नाप न भोले।

(चामुण्डराय आगे बढ़ आते हैं और वृद्धा को सम्बोधित करते हैं)

देवी, माँ, आयी हो,
आशीषें लायी हो,
ज्ञानामृत झर रहा,
अन्तस् को भर रहा।

वृद्धा : क्षीण प्राण, क्षीणगात्र
हाथ में न स्वर्णपात्र
संबल बस भक्तिमात्र।
प्रश्न जो मैं पूछूं तो उत्तर की पूर्त्ति हो
फिर मेरी काया ही कुष्माण्डिनी मूर्ति हो।
क्या प्रभु ने चाहा स्वर्ण-कलश ?
फिर त्याग गये क्यों विभव अलस ?

(वाद्यध्वनि। प्रश्न चामुण्डराय के अन्तर्मन को झकझोर देता है। उनका हृदय विनय-भक्ति से भर आता है)

चामुण्डराय : अज्जी ! मेरा शूल अहं का, सूक्ष्म जतन से खींच लिया।
कर्त्तव्यों के रुखे पथ को, मधुर धार से सींच दिया॥
(अज्जी का हाथ पकड़, मूर्ति के मस्तक के निकट ले जाकर)
आओ देवी, ज्योति जगाती, ढारो प्रभु-मस्तक पर क्षीर।
प्रक्षालन प्रभु-चरणों का हो, हर्षित हो श्रद्धानत भीर॥
(वृद्धा गुल्लिकाफल की दुग्धधारा प्रतिमा के मस्तक पर अर्पित करती है)
(पुरुष-नारी युगल का प्रवेश। गायन-नृत्य)

पुरुष-नारी : डूब गये स्वर्ण कलश
भक्ति जल प्रवाह में
भीग गये पाहन-कण
निमिष एक पाप हरण
प्रक्षालित शीश-चरण
लघु फल की धार में।
रजत-बिन्दु चमक उठे
गुल्लिका आह्वान में।
श्रद्धा ही शतशत स्वर्ण-कलश
बूढ़ी अज्जी का अक्षय यश
(जयकारों की ध्वनि से आकाश गूँज उठता है)
जय गुल्लिका अज्जी
जय श्रद्धा भक्ति
जय बाहुबली
जय आत्मशक्ति
(बार-बार उच्चारण)

(पटाक्षेप)

भारतीय ज्ञानपीठ
18, इन्स्टीट्यूशनल एरिया, लोदी रोड, नयी दिल्ली - 110 003
संस्थापक : स्व. साहू शान्तिप्रसाद जैन, स्व. श्रीमती रमा जैन